सुधा बीज बोने से पहले कालकूट पीना होगा।
पहन मौत का मुकट, विश्व-हित मानव को जीना होगा ॥

वर्ष २] मथुरा, २० दिसम्बर सन् १९४१ [अंक १२

योग वीणा

(पं० सत्य नारायण जी पाण्डेय 'सत्य')

अधर में कम्पन आया मौन,
हुआ मुखरित स्वर में जग लीन।
सुनाए करुणा के दो शब्द,
मिली है अब तंत्री से मीन॥

बजंत्री ने छेड़ा आलाप,
तू बड़ी कुंडलिना में पीन।
बजाने को जो मम स्थान,
हृदय रस के चसके में लीन ॥

कसे मन से भावों के तार,
बना मिजराब हमारा प्रेम।
आज योगी ने बीणा छेड़,
सुनाई तान निभाया नेम।

मिले स्वर गुंजित अनहद शब्द,
मोड़ मे अनिल अनल का खेल।
विकंपित सारा स्वर ससार,
एक परदे में सबका मेल॥

वेद माँ ने भाँका चुपचाप,
राग में देखा प्रिय का देश।
चेतना मचल उठी हो व्यस्त,
बदलने को निज स्वाभाविक वेष॥

सुधा बीज बोने से पहले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकट, विश्व-हित मानव को जीना होगा॥

मथुरा २० दिसम्बर सन् १९४१

ईश्वरीय प्रेरणा

इस अङ्क के साथ अखंड ज्योति का दूसरा वर्ष समाप्त हो जाता है और आगामी मास-२० जनवरी को 'सतयुग अङ्क' भेंट करते हुए तीसरे वर्ष में पदार्पण होता है। इन पिछले दो वर्षों के ऊपर दृष्टि-पात करते हुए हमारा हृदय आनन्द से पुलकित हो जाता है। ईश्वर की जिस महान प्रेरणा को शिरोधार्य करके हमने बिना अपनी योग्यता और स्थिति का ख्याल किए हुए, इस पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया था, उस समय हमारे कई माननीय मित्रों ने कहा था –'इस समय तो अखबारों के बन्द होने का समय है, आप नया पत्र आरम्भ कर रहे हैं, सो भी ऐसे विषय का जिसमें इस बीसवीं शताब्दी को कोई रुचि नहीं है।' व्यवहारिक दृष्टि से उनका कथन बिलकुल सत्य था। लड़ाई के कारण कागज़ पर असाधारण महँगाई आने की उस समय भी आशंका थी। पाँच गुनी कीमत हो जाने का अन्दाज नहीं था, पर इतना तो जानते थे कि कुछ मँहगाई जरूर आयेगी, सामयिक परिवर्तन के एक जानकार और एक प्रमुख पत्र के सम्पादक ने हम से कहा था कि 'आपको अपनी पूंजी से हाथ धोकर बैठना पड़ेगा। ऐसी पत्रिकाऐं इस जमाने में नहीं चल सकतीं।' तर्कों की दृष्टि से हमारे पास इस बहुमूल्य सम्मतियों के विरुद्ध कुछ कहने को न था। हम अपनी अयोग्यताओं को भी जानते थे। इस पर भी हठात् 'अखण्ड ज्योति' निकाल ही दी। तर्कें कहती थीं कि –'ठहरो।' प्रेरक कहता था कि– 'निमित्त मात्र' भव सव्यसाचिन्' हे अर्जुन, तू तो निमित्त मात्र बन जा। करने वाला तू नहीं मैं हूँ।' हृदय में कोई बैठा हुआ गुन गुना रहा था कि–'मुझे कुछ नवीन प्रेरणा संसार के लिये करनी है, तुझे उसका निमित्त बनना है। हमने अबोध बालक की तरह माता के अंचल में मुँह छिपा लिया और कहा–'मालिक तेरी रजा रहे, और तू ही तू रहे।' प्रभो! आपकी इच्छा पूर्ण हो, हमारा अपना कुछ नहीं, आपकी वस्तु आपके काम आवे यह स्वीकार करने में हमें कुछ भी आना कानी नहीं है।

× × ×

"निराशा, अन्धकार, भ्रम जजाल के बीहड़ बन में भटकने वाले प्राणियों को पहले प्रकाश और पथ प्रदर्शन की आवश्यकता है। वर्तमान समाज को आज ज्ञान और कर्म की आवश्यकता है, सदाचार, आत्म विश्वास, उत्साह और कर्तव्य परायणता द्वारा आज की जटिल स्थिति में से मनुष्य जाति का उद्धार होगा। ईश्वर भक्ति, सर्वो-त्तम महान् तप साधना है, पर बीमारों को मोहन भोग नहीं, मूँग की दाल का पानी देना है। तृषा-तुर को पहले पानी पिलाना है, पीछे ज्ञानोपदेश करना है। पहले ज्ञानोपदेश और पीछे पानी पिलाने की व्यवस्था होगी, तो कुछ ठीक परिणाम न निकलेगा। इस समय हमारा समाज बहुत भटक गया है। पिता अपने पुत्रों को सुखी और स्वाधीन देखना चाहता है, उन्हें बहुत कुछ देना चाहता है, पर लेने वालों की दशा ही विचित्र हो गई है। उनमें ऐसे बड़े बड़े छेद हो गये हैं कि दी गई वस्तु ठहरती ही नहीं। इन पात्रों को भरने के लिए पहले छेद बन्द करने होंगे। ईश्वर से अधिक मांगना–यह उचित मार्ग नहीं है, क्योंकि वह तो अपने पुत्रों को अधिक से अधिक देने के लिए स्वयं आतुर हो रहा है, फूटे छेद वाले पात्रों में वह अपनी महती कृपा

को डालता है, पर सब निष्फल हो जाता है। इस लिए जगत् पिता को इच्छा है कि पहले इन छिद्रों को बन्द किया जाय। यह छिद्र हैं—'मानव जाति के दुर्गुण।' निराशा, अनुत्साह, आलस्य को अपना कर हमने शैतानी पंजा अपने शिर पर रखवाया है, जिस प्रकार दुखद स्थिति हमारे निमंत्रण पर आई है, उसी प्रकार सुखद परिस्थिति भी हमारी इच्छानुसार ही आवेगी। नमक माँगने पर माता ने नमक दिया है, जब मिठाई की इच्छा होगी, तो वह उदारतापूर्वक मधुर मिष्ठान्नों का भरा थाल भी हमें परोस देगी। इसके लिये हमारी अपनी इच्छा की आवश्यकता है। उत्साह, जागृति, स्फूर्ति, विवेक, वैराग्य को जब हम अपनावेंगे तो नटनागर मुरली की मधुर ध्वनि से इस पुण्य भूमि को निनादित करते हुए, भूभार हरने के लिये पूर्व से ही अपनी सुनहरी किरणें वितरित करते हुए उदय होंगे।"

× × × ×

वर्तमान युग की यह वाणी, कर्म और ज्ञान का संदेश, मृत समाज के कानों में सुनाने के लिए यह अखण्ड ज्योति-छोटी सी अग्रदूती प्रकट हुई थी। इन दो वर्षों के इसकी सफलता पर दृष्टिपात करते हुए, अब हमें पूरा पूरा विश्वास हो गया है कि हमारे अन्तःकरण की गुनगुनाहट कोई भ्रम नहीं था, वरन निश्चित रूप से प्रभु का निर्देश था। इस थोड़े समय में, इस छोटी सी शक्ति द्वारा प्रभु ने जितना काम कराया, वह हमें तो एक चमत्कार की तरह प्रतीत होता है। जितनी अधिक संख्या में इसके पाठक हैं, उसे देखते हुए एक विद्वान ने कहा था कि भारत से समस्त धार्मिक पत्रों में 'कल्याण' के बाद 'अखण्ड ज्योति' का ही दूसरा नम्बर है। हमारे पास न तो प्रचार के साधन हैं, न पैसा, न योग्यता, न सहायक, न कर्मचारी। एक छोटे से आठ दस रुपये किरायेके कमरेमें रखे हुए कार्यालय में एक व्यक्ति द्वारा इतना कार्य कैसे होता है? यह ईश्वर ही जाने। भारतवर्ष के एक कौने से दूसरे कौने तक, समुद्र पार अनेक देशों में, अखण्ड ज्योति की पहुँच कैसे हुई? इसका संदेश इतनी दूर दूर कैसे पहुँचा? ऐसी कपाल और सहयोगियों की संख्या इतनी तेजी से कौन बढ़ा रहा है? लेखों को दिन दिन इतना अधिक गंभीर ज्ञान मय कौन बनाता जा रहा है? इन प्रश्नों का हमारे पास कोई उत्तर नहीं है, क्योंकि इस नट-नागर की पुण्य भूमि मथुरा नगरी में एक अदृश्य सत्ता के अतिरिक्त और कोई अपना सहायक दिखाई नहीं पड़ता। आध्यात्मिक जिज्ञासाओं से भरी हुई तीस-तीस चिट्ठियोंके विस्तृत और संतोषजनक उत्तर प्रतिदिन कौन लिखता है? हमें यह कहने का साहस नहीं होता कि 'हमारे हाथ' क्योंकि इतने अक्षर तो ये तीन दिन में भी नहीं लिख सकते थे। अखण्ड ज्योति की पाठक सामिग्री, पुस्तकों का रचना कार्य, पत्र व्यवहार, यह हमारा सब कार्य एक दिन एक धुरंधर साहित्यक ने यहाँ आकर देखा था और हिसाब लगा कर बताया था कि इतना कार्य कम से कम पाँच आदमी मिलकर ही कर सकते हैं। जितना यह प्रयत्न हो रहा है, उसके परिमाण से हजारों गुनी अधिक उद्देश्य पूर्ति हो रही है। हमारी आँखों ने देखा है कि हजारों व्यक्तयों की जीवन दिशा में इस प्रयत्न से आमूल चूल परिवर्तन हो गया है और लाखों करोड़ों के हृदयों में 'अखण्ड ज्योति' द्वारा प्रचारित कराई गई, ईश्वरीय भावनाएं हाहाकारी स्पंदन कर रही हैं। अगणित आत्माएं इन प्रश्नों की ओर आकर्षित हुई हैं कि हम क्या हैं? क्यों आये हैं? क्या कर्तव्य है? क्या कर रहे हैं? और क्या करना चाहिए? आने वाला सत् युग आकाश में घुमड़ रहा है, अखण्ड ज्योति उसकी एक गड़गड़ाहट मात्र है।

× × ×

बेशक 'ज्योति' के हम पृष्ठ नहीं बढ़ा सके, अधिक सुन्दर इसे नहीं बना सके, रंग बिरंगे चित्रों से इसे न सजा सके, मोटे मोटे विशेषांक न निकाल सके क्यों नहीं? इसका कारण भी हम नहीं जानते पतिव्रता स्त्री इतनी ही कर सकता है कि उसक स्वामी जो कुछ साग सत्तू लाकर घर में रख दे उसकी प्रेम पूर्वक रसोई बनादे। पाठक स्वयं ह विचारें कि हम अपनी नगन्य योग्यताओं

अनुसार और क्या कर सकते हैं ? प्रभु या तो इसे छोटी-ऐसी ही रखना चाहते होंगे, या क्रमशः हमारे कन्धों को मजबूत करने और अधिक बोझ रखने की इच्छा करते होंगे। जो हो, हमें कुछ आपत्ति नहीं। हमने अपने को उन्हें सुपुर्द कर दिया है जो करावेंगे वह करते चलेंगे। जब वे और अधिक जन समूह के हृदयों में इसे अपनाने की प्रेरणा करेंगे और जिन्हें अमानत स्वरूप धन देरखा है उनको आज्ञा देकर अर्थ व्यवस्था करावेंगे तो यह और अधिक सुन्दर बन जायगा। इस उलझन में हम क्यों पड़ें ? जानें, उनका काम जाने।

× × × ×

इस गला घोंटू अर्थ सङ्कट के समय में जब कि अखबारों की मृत्यु संख्या दिन-दिन बढ़ती जा रही है और कितने ही मृत्यु शय्या पर पड़े हुए अन्तिम सांसें ले रहे हैं। अखंड-ज्योति सब प्रकार की चिन्ताओं से मुक्त है। क्योंकि उसे अपने प्रेरक पर विश्वास है। अभी इसी मास की ही एक छोटीसी घटना सुनिये—प्रेस का बहुत बड़ा बिल चुकाने को सामने पड़ा था। दिसम्बर महीने के लिये कागज नहीं था; छपाई की सामिग्री हर महीने पहले महीने से अधिक बढ़ जाती है। इस पर भी 'सतयुग'—अङ्क' निकालने की बड़ी प्रबल प्रेरणा उठ रही थी। आँखों के सामने अँधेरा था, चिन्ता में बैठे-बैठे पूरा दिन व्यतीत हो गया। भोजन की भी इच्छा न हुई। कई मित्र आ गये, खिन्नता का कारण पूछने लगे उन्हें बनावटी हँसी हँसकर टाल दिया गया। दूसरे दिन कांपते हाथों ने काम आरम्भ किया पर मनमें कुछ नई स्फूर्ति आ रही थी मानों कोई कह रहा हो कि —"हे निमित्त ! अपने को कर्ता मत मान। जिस का काम है वह स्वयं चिन्ता कर रहा है।" दो पहर को सतयुग अंक के संपादक पं० ऋषिराम जी शुक्ल का १०१) का मनीआर्डर सहायतार्थ बिना किसी पूर्व सूचना के आ गया। इसी प्रकार अफ्रीका से एक २० शिलिंग का चैक बिना क्रिया याचना के आ पहुँचा, चिन्ताकाप्रश्न बहुत अंशोंमें उसी दिन हल हो गया। सब व्यवस्था यथा विधि चलने लगी। विभिन्न प्रकार की ऐसी घटनाऐं नित्य घटित होती रहती हैं जिनसे प्रतीत होता है कि अखण्ड-ज्योति का अपना कोई विशेष मिशन नहीं है। यह तो एक अदृश्य प्रेरणा की हुङ्कार मात्र है।

× × × ×

गत वर्ष हमने एक वर्ष की सफलता पर पाठकों को कृपाके लिये उन्हें धन्यवाद दिया था और इसको आर्थिक सहायता की अपील की थी। इस वर्ष भी स्थूल दृष्टि से उन दोनों बातों को दुहराने की आवश्यकता प्रतीत होती है। परन्तु सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर इसका कुछ महत्व प्रतीत नहीं होता क्योंकि जो पाठक निस्वार्थ भाव से अखण्ड-ज्योति पर इतना हार्दिक प्रेम प्रकट कर रहे हैं, उसका कारण हम या 'ज्योति' नहीं वरन् ईश्वरीय सत्ता है। अनेक अपरिचित मित्रों का सच्चा सौहार्द, पवित्र प्रेम गुरुजनों का वात्सल्य हमारी योग्यता के आधार पर नहीं प्रभु की प्रेरक शक्ति द्वारा प्राप्त हो रहा है। अपनी पुण्य नगरी में बुलाकर जिन लीलाधर भगवान् ने इस महान् प्रचार का साधन निर्मित किया है उन्हीं नन्दकिशोर की वीणा हमारे कानों में झन झना रही है। देखिए वे कह रहे हैं—"वत्स ! चिन्ता मत करो ? अपने सन्देश का विश्व व्यापी प्रचार करने की जिम्मेदारी मेरे ऊपर है। तुम तो निमित्त मात्र हो। मैं अखण्ड-ज्योति के अधिक पाठक बढ़ाने की अपने भक्तजनों के हृदयों में स्वयं प्रेरणा कर रहा हूँ। इसकी उन्नति करने के लिये मेरी माया यथा विधि काम कर रही है।'

इसलिये इन क्षेत्रों में हम धन्यवाद का कोरा दम्भ न दिखाकर पाठकों की ईश्वर प्रेरित सात्विक आत्म चेतना को श्रद्धा से नत मस्तक होकर प्रणाम करते हुए, इन पंक्तियों को समाप्त करते हैं और आशा करते है कि अखण्ड-ज्योति का ज्ञान यज्ञ सत्य के अन्वेषकों के हृदयों में एक नवीन स्फूर्ति प्रदान करेगा, जिसके आधार पर वे समुचित शांति प्राप्त कर सकेंगे। परमात्मन, आपकी इच्छा पूर्ण हो।

'बलमुपास्व'

श्रुति कहती है कि बल की उपासना करो, क्योंकि निर्बलों का जगत में कहीं ठिकाना नहीं। विश्व में अमित ऐश्वर्य भरा हुआ है, पर उनके भोगने का अधिकार केवल बलवानों को ही है। मनुष्य सुख की इच्छा करते हैं, परन्तु वे नहीं जानते कि बिलकुल समीप होने पर भी निर्बल व्यक्ति सुख-सामिग्री को भोग नहीं सकता। सुख एक साझेदारी का सौदा है, जिसे हम बल की सहायता से भोगते हैं। न तो केवल वस्तुओं में सुख है और न केवल इच्छा में। उदाहरण लीजिये—सुस्वाद भोजन सामने तैयार है और खाने की आपकी इच्छा भी है, पर आमाशय निर्बल है, मुख का स्वाद कडुआ रहता है। एक ग्रास खाते ही पेट मना करता है और मितली आती है। ऐसी दशा में वह सुस्वाद भोजन व्यर्थ है। एक व्यक्ति में बुद्धिबल है, वह धन को ठीक प्रकार कमाता और खर्च करता है। तदनुसार सुखी रहता है, किन्तु दूसरा मनुष्य कंजूस है या फ़िजूल खर्च है तो इस बौद्धिक निर्बलता के कारण धन रहते हुए भी उसका सुख न भोग सकेगा। ब्रह्मचर्य पर धर्मशास्त्रों में बहुत अधिक ज़ोर इसलिये दिया है कि इससे बल की पूँजी जमा होती है। चाहे ब्रह्मचर्य पालना स्वयं कुछ सुखप्रद बात प्रतीत न हो, पर यह निश्चय है कि उस सञ्चय द्वारा ही नाना प्रकार के भोगों को भोगने की शक्ति स्थिर रहती है। बालक को अन्न-प्राशन संस्कार के अन्त में आशीर्वाद दिया जाता है कि तू 'अन्नपति' और 'अन्नाद' हो। केवल अन्नपति होने से काम नहीं चलेगा, यदि वह अन्नाद (खाकर पचाने वाला) भी न हो।

आपके पास उत्तम इन्द्रियाँ हैं, पर बल नहीं है तो शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श के उत्तमोत्तम साधन होने पर भी बेकार है। किन्तु यदि शरीर में बल है तो साधारण साधन भी पर्याप्त आनन्ददायक होंगे। सद्ग्रन्थों में गुह्यज्ञान छिपा पड़ा है, पर यदि पढ़ने की योग्यता नहीं है तो वह हमें कुछ भी लाभ नहीं पहुंचा सकता। घोड़े की सवारी बहुत अच्छी है, पर बीमार के लिये तो हाथ-पैर तोड़ देने का ही एक निमित्त है। लोग समझते हैं कि हमें अमुक वस्तु प्राप्त होती तो बहुत सुख होता, परन्तु देखा गया है कि जिन दुर्बलात्माओं के पास वे वस्तुएँ हैं, वे उनसे सुख नहीं, दुख पाते। कंजूस को उसका धन डकैती, कत्ल आदि का ही भय उपस्थित करता है। नपुन्सक को सुन्दर स्त्री कुढ़ाती ही है। हिन्दुओं को जुलूस, बाजा आदि साधारण नागरिक अधिकारों का उपयोग करने में भी आहत होना पड़ता है। इसका कारण और कुछ नहीं, निर्बलता है। जब आप बलवान हो जायेंगे तो पड़ौसी आपको अनुचित रीति से दबाना छोड़ देंगे और खुद दोस्ती के लिये हाथ बढ़ावेंगे। प्रार्थना करना, समझाना, न्याय की दुहाई देना, यह कहने-सुनने की चीज है, व्यवहार की नहीं। व्यवहार में बल ही एक मात्र उपाय है जिससे हम सुखपूर्वक जीवन यापन कर सकते हैं। इसीलिये श्रुति ने बड़े उच्च शब्दों में आदेश किया है कि—'बल मुपास्व'।

निर्बलता पाप है। पाप का ही दूसरा नाम दुख है। यदि आप कोई दुख भोग रहे हों तो समझिये कि उसके साथ निर्बलता अवश्य बँधी हुई होगी। शरीर की कमजोरी से रोग घेरते हैं, सङ्गठन की कमज़ोरी से बाहरी आक्रमण होते हैं, मानसिक कमज़ोरी से मानसिक वेदनाएँ होती हैं. इसी प्रकार आध्यात्मिक कमज़ोरी से नारकीय यन्त्रणाएँ सहनी पड़ती हैं। निर्बल सदा पराश्रित रहेंगे और पराश्रितों को विपत्तियाँ ही सतावेंगी। आप अपने जीवन को सुखी बनाना चाहते हैं तो किसी दूसरे की सहायता की आशा मत कीजिये और न शेखचिल्ली की तरह अप्राप्य वस्तुओं में मन डुलाइये। आप तो अपनी योग्यता बढ़ाइये, शक्ति-संचय कीजिये, बलवान बनिये. तभी इष्ट उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेंगे।

स्मरण रखिए पुरुष सिंहों के लिए श्रुति का एक ही महत्वपूर्ण आदेश है—'बलमुपास्व' अर्थात् बल की उपासना करो।

समय का आदर करो

राष्ट्रपति वाशिंगटन ठीक चार बजे भोजन करते थे। उन्होंने कांग्रेस के नये सदस्यों को एक दावत दी, सदस्य गण कुछ मिनट बाद पहुँचे तो उन्होंने देखा कि राष्ट्रपति भोजन कर रहे हैं। उन्हें बड़ा संताप हुआ। यह देख कर वाशिंगटन ने कहा-'मेरा रसोइया आगन्तुकों की नहीं घड़ी की प्रतीक्षा करता है।' एक बार उनके सैक्रेटरी कुछ देर से पहुँचे और घड़ी के सुस्त होने का कारण बताते हुए क्षमा माँगने लगे। वाशिंगटन ने कहा-'महाशय या तो आप दूसरी घड़ी बदलिये वरना मुझे दूसरा सैक्रेटरी बदलना पड़ेगा।'

नेपोलियन समय का बड़ा पाबंद था, एक बार उसने अपने एक सेनापति को भोजन के लिये बुलाया किन्तु वह देर से पहुँचे। नेपोलियन खाना समाप्त करके उठ ही रहे थे कि वह आ गया। उसे देख कर नेपोलियन ने कहा- 'भोजन का वक्त समाप्त हो गया। चलिये अब आगे का काम शुरू करें।' नेपोलियन का कहना है कि -पाँच मिनट का मूल्य न समझने के कारण ही आस्ट्रेयिन लोग हार गये इसी तरह उसके पतन और वाटरलू को हार का मुख्य कारण कुछ घड़ियों की देर ही थी। ग्राउच समय पर नहीं आया और उसके लिये नेपोलियन को ठहराना पड़ा, बस, इतनी सी चूक के कारण नेपोलियन कैद करके सेन्ट हेलेना के टापू पर भेज दिया गया।

सर वाल्टर स्काट ने लिखा है—' जो काम करना हो उसे शीघ्र कर डालना चाहिये। उचित समय पर ठीक काम करने की आदत बड़ी ही मूल्यवान है। काम करने के पश्चात् आराम करो, आराम के लिये काम को आगे के लिये मत टालो।" होरेस ग्रीले का कथन है—" समय का अर्थ है पैसा। जो व्यक्ति मेरा एक घंटा बर्बाद करता है, मैं समझता हूँ कि उसने मेरे पाँच डालर छीन लिये।" कावेट में अपने आत्म चरित्र में बताया है कि—" मेरी सफलताओं का असली कारण मेरी योग्यता नहीं, तत्परता है। जो काम मुझे करना होता है, उसके लिये एक घण्टा पहले से ही तैयार होता हूँ। कभी किसी व्यक्ति को मेरे लिये इन्तजार नहीं करना पड़ा।" मेरिया एजवर्थ का कथन है कि—" वर्तमान क्षणों के बराबर और कोई शक्तिशाली वस्तु नहीं है। जो मनुष्य अपने क्षणों को काम में नहीं लाता और भविष्य के लिये मनसूबे बाँधा करता है, वह उन कामों को कभी पूरा न कर सकेगा।" रस्किन कहता है—' हमारा हरएक घण्टा भाग्य का निर्माण करता है जिसने अपने काम करने के दिन योंही बिता दिये वह पछताने के अलावा और क्या करेगा?' लोहा ठंडा हो जाने पर घन पटकने से क्या लाभ होगा? लाफोन्टेन का उपदेश है कि " दौड़ना बेकार है। महत्व की बात तो यह है कि समय पर निकल पड़ो।" शेक्सपियर कहता है—' आज का दिन आलस्य में गँवा दोगे तो कल भी वही दशा होगी, फिर और अधिक सुस्ती आवेगी।"

कई बार तो ऐसी घड़ियाँ होती हैं, जिन्हें हम पहचान नहीं पाते और योंही गंवा देते हैं, फल स्वरूप पीछे पछताना पड़ता है। स्टेशन पर पहुँचते हैं, तो देखते हैं कि चन्द मिनट पहले रेल चली गई। डाकखाने पहुँचते हैं, तो मालूम होता है कि डाक चली गई। एक रेल चलाने वाले की घड़ी जरा सुस्त हो जाती है, फल स्वरूप दो रेलें लड़ जाती हैं और अनेक जीव नष्ट हो जाते हैं। एक ऐजेन्ट रुपया भेजने में देरी करता है, उधर व्यापारी का देवाला निकल जाता है। सीजर को राजसभा में एक खबर पहुँचाने में देर होगई, जिससे उसे अपनी जान गँवानी पड़ी। कर्नल राहल को एक पत्र मिलता है, वह ताश के खेल में व्यस्त होने के कारण उस पत्र को जेब में डाल लेता था। खेल खतम करके जब पत्र को पढ़ा, तो वे घड़ियाँ निकल जाती हैं, जिन में वह अपनी जान बचा सकता था। कुछ ही मिनटों में दुश्मन की फौज आ घेरती है और कर्नल को अपने साथियों सहित मौत के घाट उतरना पड़ता है।

❋ भागिये मत ❋

सन् ७९ में रोम नगर के पोम्पाई नगर के निकट एक बड़ा ज्वालामुखी फटा। यह दुर्घटना इतने जोर की हुई कि वह विशाल नगर खँडहर बन गया और ज्वालामुखी की धूलि में दब कर सदैव के लिए भूगर्भ में विलीन हो गया।

पौने दो हजार वर्ष के लम्बे अरसे के बाद यह बात केवल इतिहास के पन्नों पर धुँधली तरह से अंकित रह गई थी। किसे मालूम था कि यह नगर अभी बिलकुल ही नष्ट नहीं हुआ है। भूतत्व वेत्ताओं ने उन टीलों को खोदा तो उस में से प्राचीन गौरव की साक्षी देता हुआ भग्नावेश एक सुन्दर नगर निकल आया।

उस समय भूकम्प से बचे हुए निवासियों ने अपनी विपत्ति के कुछ संस्मरण लिखे थे, जो अब तक सुरक्षित हैं। उनमें लिखा है कि जब भूकम्प के धड़ाके हुए तो लोग भागने लगे। जिसे जहाँ बन पड़ा भागा। कुछ बच गये कुछ मर गये। 'भागने वालों में से कुछ ने राजद्वार के प्रहरी से कहा चलो—तुम भी भाग चलो।' उसने उत्तर दिया—'मेरा कर्तव्य मुझे अपनी ड्यूटी पर से हटने की आज्ञा नहीं देता।' वह अपना चपरास पहने हुए जहाँ की तहाँ खड़ा रहा और उस महान् नगर के साथ साथ समाधि मग्न हो गया।

।तक खुदाई पहुँची, तो देखा कि कि एक प्रहरी का अस्थि पिंजर ज्यों का त्यों खड़ा है। चपरास का बिल्ला और तलवार की गलित प्रतिमा उसी पिंजर से सटी हुई है। वह चाहता तो दूसरे लोगों की तरह भाग सकता था, पर कर्तव्य ने उसे ऐसा कर रोक दिया।

रोम में उस कंकाल का शाही स्वागत किया और देश ने अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। शताब्दियाँ बीत गईं, पर वह रोम का कर्म निष्ठ प्रहरी सीधा खड़ा हुआ है। दर्शकों को वह कंकाल उपदेश देता है कि—"भागिये मत, अपने कर्तव्य स्थल पर खड़े रहिए, क्योंकि मनुष्य का गौरव इसी में सन्निहित है।"

सबेरे देर तक सोते रहना एक बहुत बड़ा दुर्गुण है। कोई भी महान् व्यक्ति प्रातःकाल की स्वर्णिम घड़ियों को व्यर्थ नहीं खोता। रूस का सम्राट् 'पीटर दी ग्रेट' मुँह अँधेरे उठ बैठता था। वह कहता था 'मैं अपने जीवन को यथाशक्ति बढ़ाना चाहता हूँ, इस लिए कम सोता हूँ।' इसी प्रकार 'अलफ्रेड दी ग्रेट' बड़े तड़के उठते थे। कोलम्बस कहता है—"मैंने अमेरिका यात्रा की योजनाएं प्रभात काल में बनाईं।" कोपरनिकस ने आकाशस्थ ग्रहों का अनुसंधान इन्हीं क्षणों में किया। नेपोलियन कहता है—'मैंने अपनी बड़ी-बड़ी सफलताओं की सारी तैयारियाँ सूर्योदय से पूर्व की हैं।' विद्वान बेकर चाय पानी के वक्त तक दर्जनों पत्र लिख डालता था।

युवको! सबेरे जल्दी उठो और आज का काम आज कर डालो। कोई घड़ी व्यर्थ मत गँवाओ। तुम समय का आदर करोगे, तो दुनियां तुम्हारा आदर करेगी।

स्वार्थ, मनुष्य-जाति का सर्व प्रधान अभिशाप है

× × ×

चूँ-चूँ करने वाले किवाड़ों को देख कर बड़-बड़ाओ मत, बल्कि उनके जोड़ों में तेल डाल दो।

× × ×

अच्छे दिन, बुरे दिन, त्यों ही सभी दिन व्यतीत हो जाते हैं।

आत्म शक्ति द्वारा वार्तालाप

(श्रीमती एलेक्जेण्डा डेविड नील)

तिब्बत के लामा योगियों के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के निमित्त एक बार मैं उस सीमा प्रान्त में पहुँची, जो अब जेचुएन और कांसू नामक चीनी प्रान्तों में मिला लिया गया है। तागन से कुंका दर्रे तक छै अन्य यात्री भी हमारे साथ थे, क्योंकि वहाँ घना जंगल था और तिब्बती डाकुओं का बड़ा डर था। हम लोग अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित थे, इसलिए अन्य साथियों को हमारे ऊपर बड़ा भरोसा था। इन यात्रियों में पाँच तो चीनी व्यापारी थे, छटा 'बोनपो' न्गैग्स्पा (आदि तिब्बती तांत्रिक) था। इसके बाल इतने लम्बे थे कि सिर पर पगडी की तरह बंध जाते थे।

इस तान्त्रिक को अपना साथी पाकर मुझे विशेष प्रसन्नता हुई क्योंकि मैं तो तिब्बत की आध्यात्मिक खोजों के लिये यात्रा ही कर रही थी। मैंने उसको सस्वादु भोजन कराना आरम्भ किया और अपने निकट सम्पर्क में लाने के लिए उससे वार्तालाप का क्रम बढ़ाया। बात चीत करने पर पता चला कि वह अपने गुरु बोनपो के पास उसके बड़े भारी 'दवथाव' (अनुष्ठान) में सम्मिलित होने के लिए जा रहा था। यह अनुष्ठान किसी बलवान प्रेतात्मा को वश में करने के लिए किया जा रहा था। मेरी उत्कंठा बढ़ी और मैंने चाहा कि मैं भी उसके गुरु का अनुष्ठान देखूं। पर उसने स्पष्ट कह दिया कि 'यह असंभव है' आप उनके अनुष्ठान में सम्मिलित नहीं हो सकतीं।'

फिर भी मैंने अपने प्रयत्न को छोड़ा नहीं और निश्चय किया कि इसके साथ अवश्य जाऊँगी। मैने अपने नौकरों को होशियार कर दिया कि 'इस पर गुप्त दृष्टि रखना, कहीं भाग न जाय। हमें इसी के पीछे पीछे चलना है।' न जाने कैसे वह 'न्गैग्पा' हमारी चालाकी को ताड़ गया। उसने मुझ से नम्रतापूर्वक सरल स्वभाव से कहा—"मैं किसी कपट के कारण आपको वहाँ जाने से नहीं रोकता। वहाँ बाहर के आदमियों का जाना वास्तव में ही वर्जित है। न मानने से गुरु के कार्य में विघ्न पड़ेगा और आपको भी हानि उठानी पड़ेगी। मैंने आपके आगमन और इच्छा की सूचना आत्म शक्ति के द्वारा गुरु जी को दे दी है, यदि वे उचित समझेंगे, तो आपको स्वयं बुला लेंगे।"

उसके कथन पर मुझे विश्वास न हुआ और सोचती थी, कई बार यह शिष्य लोग झूंठ बोलते हैं, वैसे ही शायद यह भी कह रहा होगा। मैं चुप हो गई, पर अपने इरादे में जरा भी परिवर्तन नहीं किया। दर्रा पार करने के पश्चात् डाकुओं का खतरा कम हो गया था, इसलिए चीनी व्यापारी तो हमारा साथ छोड़ कर अपने इच्छित स्थानों को चले गये। अब उनमें से एक न्गैग्स्पा ही हमारे साथ था। आगे की यात्रा करते हुए हम लोग चले जा रहे थे। हमने देखा कि छै घुड़ सवार तेजी से हमारी ओर दौड़े हुए चले आ रहे हैं। वे मेरे सामने आकर ठहर गये और मक्खन आदि का कुछ प्रसाद देकर बोले कि आचार्य बोनपो न्गैग्पा ने हमें आपके पास संदेश कहने भेजा है कि 'कीलीखोर' (तन्त्र वेदी) के निकट केवल दीक्षित शिष्य ही जा सकते हैं। आप अपना विचार छोड़ कर इस समय वापिस ही चली जावें।

मैंने उनकी बात मान ली और वापिस लौट आई। तब मैंने जाना कि सचमुच यह लोग आत्म शक्ति द्वारा समाचार कहने और सुनने की क्रिया को जानते हैं।

उत्तम क्रम सभी उत्तम वस्तुओं की आधार शिला है।

× × × ×

सादा जीवन, उच्च विचार

उच्च विचार, सादा जीवन में ही संभव है। अखण्ड-ज्योति के पाठक उच्च विचारों का महत्व जानते होंगे और उन्हें प्राप्त करने के लिए लालायित रहते होंगे। उन्हें जानना चाहिए कि यह सादा जीवन द्वारा ही संभव है। जितनी बनावट और अस्वाभाविकता को हम अपनाते जावेंगे उतने ही उच्च जीवन से दूर हटते जावेंगे।

सादगी का अर्थ दीनता, हीनता या दरिद्रता नहीं है, वरन् यह है कि बिना आडंबर के उपयुक्त और आवश्यक वस्तुओं का शुद्धता पूर्वक प्रयोग करना। यह सादगी हमारे नित्य व्यवहार में मिली हुई होनी चाहिए।

रहने के स्थान का हमारे ऊपर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है, इसलिए घर वहाँ होना चाहिए जहाँ दुष्ट स्वभाव के लोगों का पड़ौस न हो। जेलखाना, मदिरालय, वेश्यालय, वधस्थल अथवा दुर्गंधि पूर्ण वातावरण में हमारे घर नहीं होने चाहिए। क्योंकि यहाँ की दुर्भावनाऐं उड़-उड़ कर पड़ोसियों के मस्तिष्क में विक्षेप पैदा करती हैं। इसी प्रकार उस मकान में भी नहीं रहना चाहिए जिसमें वायु और प्रकाश की कमी हो, अथवा उसमें या उसके पड़ौस में क्रोधी, गुण्डे, दुराचारी और चिर पीड़ित लोग रहे हों तथा रहते हों। घर चाहे छोटा हो पर स्वच्छ, सुन्दर और साफ होना चाहिए। घर की सजावट भी आवश्यक है। वस्तुओं को ज्यों ज्यों पड़ी रहने न देना चाहिए और उन्हें यथास्थान लगा देना चाहिए। चित्र टाँगना और आदर्श वाक्य लिखना यह जरूरी है। यह जड़ वस्तुऐं होने पर भी चैतन्य शिक्षक का काम करती हैं और अपना प्रभाव निरन्तर वहाँ रहने वालों पर डालती रहती हैं, अपने चरित्र, स्वभाव और विचारों का सब से अच्छा परिचय अपने मकान की सजावट द्वारा दिया जा सकता है। आदर्श व्यक्तियों के चित्र और आदर्श वाक्यों को अपने यहां स्थान देना अपने लिए अवैतनिक शिक्षक नियुक्त कर लेने के समान है।

पढ़े लिखे लोगों के लिए जो इस लेख को पढ़ रहे होंगे, उनके लिए बहुत अच्छे सलाहकार साथी सद्ग्रन्थ हो सकते हैं। बुरी पुस्तकें जहाँ हमें अधः-पतन की ओर लेजाती हैं, वहाँ उत्तम पुस्तकों में यह सामर्थ्य भी मौजूद है कि हमें कुछ से कुछ बनादें। पुस्तकें छपे हुए कागजों का गट्ठा नहीं हैं वरन् एक सूत्र हैं, जो उनके लेखक की आत्मा और पाठक की आत्मा को आपस में संबंधित करते हैं। श्रेष्ठ पुरुषों के सत्सङ्ग के लिए हम कुछ समय लगाते हैं, उसी प्रकार उत्तम पुस्तकों का स्वाध्याय करने में कुछ समय लगाना चाहिए और अपनी स्थिति के अनुसार सद्ग्रन्थों का संग्रह भी करते रहना चाहिए

वस्त्र बहुत कीमती ही हों, ऐसी कोई खास जरुरत नहीं। मोटे खद्दर के कपड़े से भी काम चल सकता है, मगर वह श्वेत और स्वच्छ होने चाहिए। तड़क-भड़क के, रंग-बिरंगे या बेढब फैशन के कपड़े व्यर्थ हैं। कम कपड़े पहनने चाहिए, पर उनकी सफाई पर पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए। एक विवेकशील व्यक्ति का कथन है कि यदि तुम कपड़े की इज्जत रखोगे तो कपड़ा तुम्हारी इज्जत रखेगा। जेवर लादने की अपेक्षा तो कुछ अधिक कपड़े बनवालेने और उन्हें साफ रखने में थोड़ा खर्च करना अधिक उपयोगी है।

शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्गों की सफाई का भी ध्यान रखना चाहिए। नाक, कान, आँख, दाँत, शिर आदि में मैल न जमने देना चाहिए, खूब रगड़-रगड़ कर स्नान करना, स्वच्छ रहना, निर्मलता को पसन्द करना, नाखून, हजामत आदि के बारे में लापरवाह न रहना व्यावहारिक सभ्यता का समुचित रीति से पालन करना यह सब बातें सादा जीवन के लिए आवश्यक हैं।

मन और विचारों की सादगी इनमें ऊँची है। और उसका समुचित पालन इन बाहरी सादगियों को पालन करने के उपरान्त आता है। गृह, वस्त्र और शरीर की सादगी निश्चय ही उच्च जीवन की ओर खींच ले जाने की क्षमता रखती है। आरम्भ हमें यहीं से करना चाहिए।

नम्रता का आभूषण

(ऋषि तिरुवल्लुवर)

नम्रता और मधुर भाषण से बढ़कर भला मनुष्य का और क्या आभूषण हो सकता है ? जिसके मुख से दूसरों को आनन्दित करने वाली वाणी निकलती है, वह एक उदार दानी है, जो अपना महा प्रसाद याचकों और अयाचकों को समान रूप से सर्वत्र वितरण करता है। ऐसा व्यक्ति दुख और दारिद्र का शिकार नहीं हो सकता। जो रत्नों की कोठी खोले बैठा है, उसे पाइयों का अभाव नहीं होगा। स्वार्थ रहित होकर और दूसरों की भलाई के लिए जो वचन कहे हैं, वे ही यथार्थ में मधुर हैं। ऐसी मधुर वाणी सुनने वाले और सुनाने वाले के हृदय को जमाती है, उनमें शान्ति और शीलता के अङ्कुर उपजाती है। सेवा भावी और विनम्र वक्ता के लिए इस संसार में साथियों मित्रों और सहायकों की कुछ भी कमी नहीं रह सकती।

संसार में सुस्निग्ध पदार्थ एक ही है—मधुर वाणी। क्योंकि उसमें दया, प्रेम का मधुर रस भरा रहता है। सोने चाँदी का दान तुच्छ है, वह बेचारा उन वचनों की समता नहीं कर सकता, जो हताशों को उत्साह प्रदान करते हैं, जो भटकों को राह पर लाते हैं, जो पाप की तपन से जलने वालों के मन में धर्म का जल छिड़कते हैं और जो अन्धकार में भटकने वालों को प्रकाश प्रदान करते हैं। ऐसे वचनों का दान हीरे और लालों के दान से कैसे कम होगा ? जिनके हृदयों से सत्य प्रिय और हितकर वचन निकलते हैं, सत्य समझिए धर्म का निवास स्थान उन्हीं के अन्दर है। पवित्र भाषण एक प्रकार का प्रवाह है जो वक्ता के कलुषित विचारों को अपने बहाव में बहा लेजाता है। मधुर भाषी ही स्वर्ग का अधिकारी है।

यदि मधुर भाषण के महत्व को लोग समझ जावें तो क्रूर और दुष्ट वाणी क्यों बोलें ? हाय ! लोग मीठे फलों को छोड़कर कड़ुए, खट्टे और कच्चे फलों को क्यों कुतरते फिरते हैं ? मधुर भाषण को छोड़कर कड़ुवी वाणी क्यों बोलते हैं ?

प्रेम का रहस्य

(श्री स्वामी विवेकानन्द जी महाराज)

जिस दिन किसी वस्तु पर अथवा किसी प्राणी पर आपका प्रेम होगा फिर चाहे वह स्त्री हो, पुत्र हो अथवा दूसरा कोई हो, उस दिन आपको विश्वव्यापी प्रेम का रहस्य मालूम हो जावेगा। इन्द्रिय सुख के लिए प्रेम करने वाले मनुष्य का लक्ष बहुधा जड़ विषय के आगे नहीं जाता। हम कहते हैं कि अमुक पुरुष का अमुक स्त्री पर प्रेम हुआ, परन्तु वास्तव में प्रेम उस स्त्री के शरीर पर होता है। वह उसके भिन्न भिन्न अङ्गों का चिन्तन करता है। अर्थात जड़ विषयों में जो आकर्षण रहता है, उस आकर्षण का ही स्वरूप प्रेम नाम से पहचाने जाने वाले विकार का स्वरूप है। सत्य प्रेम का स्वरूप इससे बहुत भिन्न है। सच्चा प्रेम करने वाले, इस प्रकार के दो मनुष्य एक दूसरे से चाहे हजारों मील के अन्तर पर हों, पर उनके प्रेम में फर्क नहीं पड़ता। वह नष्ट नहीं होता और न उससे कभी दुख की उत्पत्ति होती है।

हम निग्रहीत होते हैं, बन्धन में पड़ते हैं, कैसे ? इसलिये नहीं कि हम कुछ देते हैं बल्कि इसलिए कि कुछ चाहते हैं। प्रेम करके हम दुख पाते हैं परन्तु दुख हमें इसलिए नहीं मिलता कि प्रेम करते हैं। दुख का कारण यह है कि हम प्रेम के बदले प्रेम प्राप्त करना चाहते हैं। जहाँ इच्छा नहीं है चाह नहीं है, वहाँ दुख, क्लेश भी नहीं है। निस्वार्थ भाव से दूसरों को देते रहो, तभी सुखी हो सकोगे यह प्रकृति का अखण्ड नियम है।

योगी अरविन्द घोष की वाणी

—दुःख और दुर्बलता अज्ञानजनित विकार हैं। ये व्यापक और नित्य-तत्व नहीं हैं। उनका हमें आत्मबल के द्वारा सदा के लिये नाश करना होगा, अपने लिए और समस्त मानव जाति के कल्याण के लिए इस जगत को स्वर्ग बना देना हमारा कर्तव्य है।

—कृष्ण भगवान ने महाभारत में कहा था कि कुछ लोग इस संसार में प्रवृत्ति मार्ग का उपदेश देते हैं कुछ निवृत्ति का। किन्तु मैं निवृत्ति मार्ग वाले अकर्मण्यों से सहमत नहीं हूँ। क्योंकि वे शक्तिहीन हैं। मैं भी श्री कृष्ण के उपर्युक्त कथन का अनुकरण करता हूँ।

—आपको अपने शरीर की परवाह नहीं करनी चाहिए, आप से ज्यादा परवाह परमात्मा करता है। केवल आत्मबल प्राप्त करो, शरीर रक्षा ईश्वर के भरोसे छोड़ दो।

—जहाँ धर्म है, वहाँ जय है। किन्तु धर्म के साथ ही साथ शक्ति होना जरूरी है, नहीं तो अधर्म का अभ्युत्थान हो जाता है।

—विरोध और युद्ध धर्म के अङ्ग हो सकते हैं, किंतु विद्वेष और घृणा धर्म के बाहर हैं।

—क्या आप में परमात्मा का अंश है? क्या आपको यह मालूम है कि आपका शरीर निज का नहीं, आप परमात्मा के साधन-मात्र हैं। यदि आपको यह अनुभव हो गया है, तो आप सच्चे राष्ट्र-वादी हैं और तब ही आप इस महान् राष्ट्र का उद्धार कर सकेंगे।

—योग प्राप्ति के बिना द्वन्द्व का अत्यन्त नाश नहीं होता। गुणातीत योगी यदि नरक में भी डाल दिया जाय तो वह उस नरक को स्वर्ग बना लेता है। पूर्ण ज्ञानी इस दुःख रूप जगत् को अपना स्वर्ग बना लेता है। वह कहता है—'यह सब आनन्दमय ब्रह्म है, सत्य है, शिव है, सुन्दर है।'

रामकृष्ण परमहंस के उपदेश

ईश्वर को ऐसा समझिये, जैसा खाँड़ का पर्वत। छोटी चींटी उसमें से छोटे दाने ले जाती है और बड़ी बड़े दाने उठाती है, फिर भी पर्वत ज्यों का त्यों रहता है, उसको सारा का सारा कोई नहीं उठा सकता। इसी प्रकार भक्त लोग परमात्मा के दिव्य गुणों में से थोड़ा सा प्रसाद पाकर ही प्रसन्न हो जाते हैं, पर उसका सम्पूर्ण रूप कोई नहीं जानता।

सत्पुरुषों का सत्संग ऐसा समझिये जैसे चावल का माँड। चावल का माँड पीने से नशा उतर जाता है और सत्पुरुषों के सत्संग से विषय वासनाओं की उन्मत्तता चली जाती है।

आग के पास रखने पर गीली लकड़ी भी सूख जाती है और कुछ समय बाद वह सूखी की तरह ही जलने लगती है। सत्पुरुषों का सत्संग लोभ आदि विषयों का गीलापन सुखा कर मनुष्यों को इस योग्य बना देता है कि उनमें विवेक रूप अग्नि प्रज्वलित हो सके।

आग को यों ही पड़ा रहने दिया जाय तो उस पर राख जम जायगी और थोड़ी देर बाद वह बुझ जायगी, किन्तु यदि उसे कुरेदते रहें और नया ईंधन डालते रहें तो वह फिर न बुझेगी। अकेला बैठने वाला मनुष्य बुद्धिहीन हो जाता है, किन्तु सत्पुरुषों की संगति करने वाला सदैव चैतन्य बना रहता है।

लाखों मन मोती समुद्र के गर्भ में छिपे पड़े हैं, पर वे मिलते उन्हें ही हैं जो गहरी डुबकी लगा कर खोज करते हैं। संसार में अनेक प्रकार की सिद्धियां हैं, पर वे मिलती उन्हें ही हैं जो उन्हें प्राप्त करने के लिए परिश्रम करते हैं।

—प्रेम, साहस, दया, सत्य और शील नित्य हैं, अतः ये धर्म हैं। घृणा, कायरता, निर्दयता, असत्य और नीचता विकार हैं। यही अधर्म हैं, योगी को विकारात्मक अधर्म छोड़ कर सनातन धर्म ग्रहण करने होंगे।

प्रभावशाली-व्यक्तित्व

प्रभावोत्पादक साधनों को बलवान बनाने के लिये यहाँ कुछ विशेष अभ्यास बताये जाते हैं। नेत्रों को प्रभावशाली बनाने के लिये यह अभ्यास करना बहुत उपयोगी है कि एक बड़ा दर्पण सामने रखो और अपने प्रतिबिम्ब के नेत्रों की तरफ अपनी आँखें पूरी तरह खोलकर घूरो जिससे नेत्रों की नसों पर कुछ जोर पड़े। इसमें भवों पर जोर देने की कोई आवश्यकता नहीं है। शिर को सीधा रखो और पहले प्रतिबिम्ब के बांए नेत्र पर फिर दाहिने नेत्र पर घूरना जारी रखो जब दृष्टि एक नेत्र से हटाकर दूसरे पर ले जाती हो तो इस कार्य को बहुत धीरे करना चाहिये झटके के साथ दृष्टि हटाने की भूल न करनी चाहिये। यह अभ्यास एक मिनट से आरम्भ होकर पाँच मिनट तक पहुँचाया जा सकता है। अधिक की कोई आवश्यकता नहीं। इस अभ्यास को निरन्तर करते रहने से दृष्टि प्रभावशाली हो जाती है। दृष्टि को सतेज रखने के लिये यह भी आवश्यक है कि दिन भर आँखों से बहुत अधिक परिश्रम मत लो और अँधेरे में, या तेज सवारी पर बैठकर कुछ मत पढ़ो।

वाणी को प्रभावशाली बनाना हो तो जल्दी जल्दी बहुत बकवात करने की आदत छोड़ो। कम बोलो परन्तु जब बोलो तब मन्द गति से, स्पष्ट रूप से, खुली आवाज़ से, और गम्भीरता से बोलो। कुछ पूछना हो या किसी के प्रश्न का उत्तर देना हो तब इस नियम को ठीक प्रकार काम में लाओ। तुम्हारी वाणी प्रभावशाली बन जायगी। जिस व्यक्ति से, जिस विषय पर बात करनी हैं उस से घुल-घुलकर बातें करो और अपने मनको निर्दिष्ट विषय पर ही केन्द्रित रखो। अस्थिरता और उदासीनता पूर्वक किया हुआ वार्तालाप प्रायः सफल परिणाम उपस्थित करते हुए नहीं देखा जाता।

बेशक नेत्र और वाणी यही दो इन्द्रियाँ मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाती हैं। किसी अपरिचित व्यक्ति पर अपना उद्देश्य प्रकट करने और इच्छित परिणाम उपलब्ध करने में इनका बड़ा उत्तम असर होता है। परन्तु यदि इनके पीछे सचाई न हो तो वह मायाडंबर अधिक समय तक नहीं ठहरता। इन दिनों साधनों का प्रभावशाली होना आवश्यक है पर उससे भी आवश्यक यह है कि हमारा चरित्र निर्मल हो। हम अपने को विश्वसनीय बनावें, सच्चरित्र बनावें जिससे कि अन्य व्यक्तियों का गुप्त मन अपने आप हमारा आन्तरिक परिचय प्राप्त करले और वह अपनी जमानत पर हमारे विश्वसनीय व्यक्तित्व का सिक्का उसके मन पर जमाये।

आन्तरिक शान्ति इन तीनों की जननी है। प्रभावशाली नेत्र, ओजस्वी वाणी, और निर्मल चरित्र यह तीनों ही मानसिक स्थिरता के बाल बच्चे हैं। स्वार्थान्धता और अतृप्त तृष्णा यह दोनों ही दुष्ट ऐसे हैं जो मन को विषाक्त बनाकर आन्तरिक कोलाहल उत्पन्न कर देते हैं। कूड़े के ढेर में जब तक अग्नि पड़ी रहेगी तब तक धुंआँ उठता रहेगा। बाहरी उपचार से उस धुऐ को रोकना व्यर्थ है क्योंकि उसका उद्गम स्थान जब तक मौजूद है तब तक निर्धूमता कैसी ? मानसिक अशान्ति तब तक बनी रहेगी जब तक कि हम स्वाथ और लिप्सा के गुलाम बने रहेंगे। लेने के स्थान पर देना, और भोगने के स्थान पर त्यागना जब तक न सीखा जायगा तब तक जीवन की पेचीदा गुत्थियाँ न सुलझेंगी और उस अधेड़ बुन की बेचैन आत्मा को दुखी बनाये रहेंगी। ऐसी अस्थिर अवस्था में प्रभावशाली जीवन के यह तीनों साधन प्राप्त करना कठिन है, निकल बनाई जा सकती है पर उसकी हस्ती ही कितनी है ? नकली सोना आखिर कितने दिन चमक सकेगा ?

आप प्रपंचों में अधिक लिप्त मत हूजिये, छाया के पीछे अधिक मत दौड़िये। दृढ़ रहिये और कर्तव्य

सच्ची दौलत ।

(अखण्ड ज्योति कार्यालय से प्रकाशित 'धनवान बनने के गुप्त रहस्य' पुस्तक के कुछ पृष्ठ)

सच्ची दौलत का मार्ग आत्मा को दिव्य गुणों से सम्पन्न करना है। सच समझिये हृदय की सद्-वृत्तियों को छोड़ कर बाहर कहीं भी सुख शान्ति नहीं है। भ्रमवश भले ही हम वाह्य परिस्थितियों में सुख ढूंढ़ते फिरें। यह ठीक है कि कुछ कमीने और निकम्मे आदमी भी अनायास धनवान हो जाते हैं, पर असल में वे धनपति नहीं हैं। यथार्थ में तो तुम से भी अधिक दरिद्रता भोग रहे हैं, उनका धन बेकार है, अस्थिर है और बहुत अंशों में तो वह उनके लिये दुखदायी भी है। दुर्गुणी धनवान कुछ नहीं, केवल एक भिक्षुक है। मरते समय तक जो धनी बना रहे, कहते हैं कि वह बड़ा भाग्यवान था, लेकिन हमारा मत है कि वह अभागा है, क्योंकि अगले जन्मों में अपने पापों का फल तो वह स्वयं भोगेगा, किन्तु धन को न तो भोग सका और न साथ लेजा सका। जिसके हृदय में सद्वृत्तियों का निवास है, वही सबसे बड़ा धनवान है, चाहे बाहर से वह गरीबी का जीवन ही क्यों न व्यतीत करता हो। सद्गुणी का सुखी होना निश्चित है। समृद्धि उसके स्वागत के लिए दरवाजा खोले हुए खड़ी है। यदि आप स्थायी रहने वाली सम्पदा चाहते हैं, तो धर्मात्मा बनिये। लालच में आकर अधिक पैसे जोड़ने के लिये दुष्कर्म करना, यह तो कंगाली का मार्ग है। खबरदार रहो! कि लालच के वशीभूत होकर सोना कमाने तो चलो पर बदले में मिट्टी ही हाथ लग कर न रह जाय।

एडीसन ने एक स्थान पर लिखा है कि "देवता लोग जब मनुष्य जाति पर कोई बड़ी कृपा करते हैं, तो तूफान और दुर्घटनाऐं उत्पन्न करते हैं, जिससे कि लोगों का छिपा हुआ पौरुष प्रकट हो और उन्हें अपने विकास का अवसर प्राप्त हो।" कोई पत्थर तब तक सुन्दर मूर्ति के रूप में परिणित नहीं हो सकता, जब तक कि उसे छैनी हथौड़े की हजारों छोटी-बड़ी चोटें न लगें। एकमंडवर्क कहते हैं कि—"कठिनाई, व्यायामशाला के उस उस्ताद का नाम है, जो अपने शिष्यों को पहलवान बनाने के लिए उनसे खुद लड़ता है और उन्हें पटक-पटक कर ऐसा मजबूत कर देता है कि वे दूसरे पहलवान को गिरा सकें।" जान बानथन ईश्वर से प्रार्थना किया करते थे कि—"हे प्रभु! मुझे अधिक कष्ट दे, ताकि मैं अधिक सुख भोग सकूं।"

जो वृक्ष पत्थरों और कठोर भूभागों में उत्पन्न होते हैं और जीवित रहने के लिए सर्दी, गर्मी, आँधी आदि से निरन्तर युद्ध करते हैं, देखा गया है कि वे वृक्ष अधिक सुदृढ़ और दीर्घजीवी होते हैं। जिन्हें किठन अवसरों का सामना नहीं करना पड़ता, उनसे जीवन भर कुछ महत्वपूर्ण कार्य नहीं हो सकता। एक तत्व ज्ञानी कहा करता था कि "महापुरुष दुखों के पालने में झूलते हैं और विपत्तियों का तकिया लगाते हैं। आपत्तियों की अग्नि हमारी हड्डियों को फौलाद जैसी मजबूत बनाती है।" एक बार एक युवक ने एक अध्यापक से पूछा—"क्या मैं एक दिन प्रसिद्ध चित्रकार बन सकता हूँ?" अध्यापक ने कहा—'नहीं।' इस पर

पथ पर शनैः शनैः एवं दृढ़ता के साथ कदम बढ़ाते चलिए। ईश्वर पर विश्वास रखिए, दूसरों को आत्म-भाव से देखिए और लेने की अपेक्षा देना अधिक पसन्द कीजिए। आपके अन्दर आध्यात्मिक शांति का आविर्भाव होगा और यह शान्ति निर्मल चरित्र का निर्माण करेगी। निर्मल चरित्र सूक्ष्म रूप से दूसरों के मस्तिष्क में विश्वसनीयता का स्थान पैदा करता है। साथ ही नेत्र और वाणी को प्रभाव-शाली बनाने के अभ्यास सोने में सुगन्ध का काम दे सकते हैं। इस प्रकार प्रभावशाली व्यक्तित्व प्राप्त करने में आप सफल हो सकते हैं।

उस युवक ने आश्चर्य से पूछा—'क्यों ?' अध्यापक ने उत्तर दिया—'इसलिये कि तुम्हारी पैतृक संपत्ति से एक हजार रुपया मासिक आमदनी घर बैठे हो जाती है।' पैसे के चकाचोंध में मनुष्य को अपना कर्त्तव्य पथ दिखाई नहीं पड़ता और वह रास्ता भूलकर कहीं से कहीं चला जाता है। लोहे को बार बार गरम करके तब कीमती औजार बनाये जाते हैं। हथियार तब तेज होते हैं, जब उन्हें पत्थर पर खूब घिसा जाता है। खरादपर चढ़े बिना हीरे में चमक नहीं आती। चुम्बक पत्थर को यदि रगड़ा न जाय, तो उसके अन्दर छिपी हुई अग्नि यों ही सुषुप्त अवस्था में पड़ी रहेगी। परमात्मा ने मनुष्य जाति को बहुत सी अमूल्य वस्तुऐं दी हैं, इनमें सब से अधिक महत्वपूर्ण गरीबी, कठिनाई, आपत्ति और असुविधा है, क्योंकि इन्हीं के द्वारा मनुष्य को अपने सर्वोत्तम गुणों का विकास करने योग्य अवसर मिलता है। कदाचित् परमेश्वर हर एक व्यक्ति के सब काम आसान कर देता तो निश्चय ही आलसी होकर हम लोग कब के मिट गये होते।

यदि आपने बेईमानी करके लाखों रुपये की सम्पत्ति जमा करली तो क्या बड़ा काम कर लिया ? दीन-दुखियों का रक्त चूस कर यदि अपना पेट बढ़ा लिया, तो यह क्या बड़ी सफलता हुई ? आप के अमीर बनने से यदि दूसरे अनेक व्यक्ति दरिद्र बन रहे हों, आपके व्यापार से दूसरों के जीवन पतित हो रहे हो, अनेकों की सुख शान्ति नष्ट हो रही ह, तो ऐसी अमीरी पर लानत है। स्मरण रखिये—एक दिन आपसे पूछा जायगा कि-धन को कैसे पाया ? और कैसे खर्च किया ? स्मरण रखिये आपको एक दिन न्याय तुला पर तोला जायगा और उस समय अपनी भूल पर पश्चात्ताप होगा, तब देखोगे कि आप उसके विपरीत निकले जैसा कि होना चाहिए था।

आप आश्चर्य करेंगे कि क्या बिना पैसा के भी कोई धनवान् हो सकता है ? लेकिन सत्य समझिये इस संसार में ऐसे अनेक मनुष्य हैं जिनकी जेब में एक पैसा नहीं है या जिनकी जेब ही नहीं है, फिर भी वे धनवान् हैं और इतने बड़े धनवान् कि उनकी समता दूसरा कोई नहीं कर सकता। जिसका शरीर स्वस्थ है, हृदय उदार है, और मन पवित्र है, यथार्थ में वही धनवान है। स्वस्थ शरीर चांदी से कीमती है, उदार हृदय सोने से मूल्यवान् है और पवित्र मन की कीमत रत्नों से अधिक है। लार्ड कालिंगउड कहते थे—"दूसरों को धन के ऊपर मरने दो, मैं तो बिना पसे का अमीर हूँ। क्योंकि मैं जो कमाता हूँ नेकी से कमाता हूँ !" सिसरो ने कहा—"मेरे पास थोड़े से ईमानदारी के साथ कमाये हुए पैसे हैं, परन्तु वे मुझे करोड़पतियों से अधिक आनन्द देते हैं।"

दधीचि, वशिष्ट, व्यास, बाल्मीकि, तुलसीदास, सूरदास, रामदास, कबीर आदि बिना पैसे के अमीर थे, वे जानते थे कि मनुष्य का सब आवश्यक भोजन मुख द्वारा ही अन्दर नहीं जाता और न जीवन को आनन्दमय बनाने वाली वस्तुऐं पैसे से खरीदी जा सकती हैं। ईश्वर ने जीवन रूपी पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ पर अमूल्य रहस्यों को अङ्कित कर रखा है, यदि हम चाहें तो उनको पहचान कर जीवन को प्रभाव पूर्ण बना सकते हैं। एक विशाल हृदय और उच्च आत्मा वाला मनुष्य झोपड़ी में भी रत्नों की जगमगाहट पैदा करेगा। जो सदाचारी है और परोपकार में प्रवृत्त है, वह इस लोक में भी धनी है और परलोक में भी, भले ही उसके पास द्रव्य का अभाव हो। यदि आप विनयशील, प्रेमी, निस्वार्थ और पवित्र हैं, तो विश्वास कीजिए कि आप अनन्त धन के स्वामी हैं।

जिसके पास पैसा नहीं,वह गरीब कहा जायगा, परन्तु जिसके पास केवल पैसा है, वह उससे भी अधिक कङ्गाल है। क्या आप सदबुद्धि और सद्-गुणों को धन नहीं मानते ? अष्टावक्र आठ जगह से टेढ़े थे और गरीब थे, पर जब जनक की सभा में जाकर अपने गुणों का परिचय दिया तो राजा उन का शिष्य हो गया। द्रोणाचार्य और धृतराष्ट्र के

राज दरबार में पहुंचे, तो उनके शरीर पर कपड़े भी न थे, पर उनके गुणों ने उन्हें राजकुमारों के गुरु का सन्मान पूर्ण पद दिलाया। महात्मा डियोजनीज के पास जाकर दिग्विजयी सिकन्दर ने निवेदन किया—'महात्मन् ! आपके लिये क्या वस्तु उपस्थित करूँ ?' उन्होंने उत्तर दिया—'मेरी धूप मत रोको और एक तरफ खड़े हो जाओ वह चीज मुझ से मत छीनो जो तुम मुझे नहीं दे सकते।" इस पर सिकन्दर ने कहा—'यदि मैं सिकन्दर न होता तो डयोजनीज़ ही होना पसन्द करता।'

गुरु गोविन्दसिंह, वीर हकीकतराय, छत्रपति शिवाजी, राणा प्रताप आदि ने धन के लिये अपना जीवन उत्सर्ग नहीं किया था। माननीय गोखले से एक बार एक सम्पन्न व्यक्ति ने पूछा-आप इतने राजनीतिज्ञ होते हुए भी गरीबी का जीवन क्यों व्यतीत करते हैं ? उन्होंने उत्तर दिया—'मेरे लिए यही बहुत है। पैसा जोड़ने के लिए जीवन जैसी महत्व पूर्ण वस्तु का अधिक भाग नष्ट करने में मुझे कुछ भी बुद्धिमत्ता प्रतीत नहीं होती।'

फ्रेंकलिन से एक बार उनका एक धनी मित्र यह पूछने गया कि—'मैं अपना धन कहां रक्खूं ?" उन्होंने उत्तर दिया कि–"तुम अपनी थैलियों को अपने सिर के अन्दर उलट लो, तो कोई भी उसे चुरा न सकेगा।"

तत्वज्ञों का कहना है कि हे ऐश्वर्य की इच्छा करने वालो ! अपने तुच्छ स्वार्थों को सड़े और फटे पुराने कुर्ते की तरह उतार कर फेंक दो। प्रेम और पवित्रता के नवीन परिधान धारण करलो। रोना, झीकना, घवराना, और निराश होना छोड़ो, विपुल संपदा आपके अन्दर भरी हुई है। धनवान् बनना चाहते हो तो उसकी कुञ्जी बाहर नहीं भीतर तलाश करो। धन और कुछ नहीं सद्गुणों का छोटा सा प्रदर्शन मात्र है। लालच, क्रोध, घृणा, द्वेष, छल और इन्द्रिय लिप्सा को छोड़ दो। प्रेम, पवित्रता, सज्जनता, नम्रता, दयालुता, धैर्य और प्रसन्नता से अपने मन को भरलो। बस, फिर दरिद्रता तुम्हारे द्वार से पलायन कर जायगी। निर्बलता और दीनता के दर्शन भी न होंगे। भीतर से एक ऐसी अगम्य और सर्व विजयी शक्ति का आविर्भाव होगा जिसका विशाल वैभव दूर-दूर तक प्रकाशित होगा।

गुरु नानक के वचन

आपे बीजि आपे हरि बाहु,
नानक हुकमी आबहु जाहु।

मनुष्य स्वयं कार्यों का बीज बोता है, स्वयं ही उसका फल खाता है, ईश्वर की आज्ञा के अन्दर इसका विभिन्न योनियों में पुनर्जन्म होता है।

"जे जी सिरठि उपाई। वैखा वेणु करमा किमि लैलई।"

शुभ और उचित कर्मों का फल ही मिलता है, जितनी सृष्टि दिखाई पड़ रही है, सब को कर्मों के अनुसार ही फल मिलता है।

"चंगा या बुराइयां बाचे धरम हजूर।"

शुभ कर्म और कुकर्म उस धर्मराट् परमेश्वर के सन्मुख प्रगट हैं। इस लोक में और परलोक में सब को अपने ही कर्मों का फल मिलता है, और का नहीं।

जे बडु आपि जाणै आपि आपि।
नानक नदरी करमी दाति।

ईश्वर की महिमा अथवा प्रतिष्ठा का पूर्ण वर्णन वह स्वयं ही जानता है, परन्तु नानक इतना जानता है, कि कृपा और अनुग्रह कर्मों (के अनुसार आचरण करने) पर होती है।

तद बिन सिद्धी किने न पायां,
करमी मिलें नहीं ठाक रहाई।

बल और महत्व जिसको देता है उसे प्राप्त होना है और उसे भी तू न्याय के आधार पर कर्मों के अनुसार देता हैं।

कथा—

त्याग और प्रेम का महत्व

(श्री० जगन्नाथ राव नायडू, नागपुर)

एक राजा अपने मंत्री पर पूर्ण विश्वास रखता था। परन्तु वह मन्त्री ऐसा विश्वासघाती था कि राजा के प्रति अपने धर्म को छोड़ कर दूसरे लोगों मे मिल जाता और राजा की आँखो में धूलि झोंक कर अन्य लोगों से धन ले आता और मौज करता। अपने धर्म-कर्म का उसे ध्यान न रहा और स्वार्थ लिप्सा में फँस गया।

राजा को कुछ सन्देह हुआ तो उसने मन्त्री से पूछा कि तुम्हें राज्य दरबार से जितने रुपये मिलते हैं उससे अधिक खर्च किस प्रकार करते हो? तो वह कह देता मेरे रिश्तेदारों के यहाँ से कुछ भेंट पूजा प्राप्त हो जाती है। उस समय राजा चुप हो गया पर वास्तविकता का पता लगाने का प्रयत्न करता रहा। जब उसने यह विश्वास कर लिया कि मन्त्री अपने स्वामी के साथ विश्वासघात करके अनीति पूर्वक धन प्राप्त करता है, तो उसे बड़ा दुःख हुआ।

मन्त्री का सुधार करने की इच्छा से राजा ने कुछ दण्ड दिया। परन्तु वह मूर्ख भला कब मानने वाला था। उसने दण्ड से सुधरने की बजाय बदला लेने का निश्चय किया और तरह-तरह से राजा को बदनाम करने लगा। मन्त्री सोचता था कि मेरे दूषित कर्मों का भंडाफोड़ होगा तो मुझे दण्ड मिलेगा, इसलिए क्यों नहीं राजा से पहले ही बदला लेलूँ और इसे सब लोगों की निगाह में गिरा कर अशक्त करदूँ।

परिस्थिति बड़ी विषम हो गई। राजा की इच्छा मंत्री को सुधारने की थी, वह नहीं चाहता था कि यह दुख भोगे, तो दर-दर मारा फिरे। वह चाहता था कि यह अब भी सुधर जाय और अपने गौरव को पूर्ववत् बनाये रहे। किन्तु मन्त्री तो विषधर सर्प की तरह उलटी ही चाल चल रहा था। दोनों के मन, दिन-दिन अधिक फटते जाते थे। अशान्ति और कलह का वेग प्रचण्ड होता जा रहा था। एक बना हुआ राज्य शासन नष्ट होने के लिए चौराहे पर खड़ा था। राजा और मन्त्री की पूर्व घनिष्ठता इतनी अधिक थी कि एक के अलग हो जाने पर राज्य की सुन्दर वाटिका बिलकुल ही नष्ट भ्रष्ट हो जाती।

राजगुरू को पता चला कि मेरा शिष्य अमुक राजा का राज्य गृह कलह के कारण नष्ट होना चाहता है। उन्होंने योग-दृष्टि से सारी घटना का सूक्ष्म निरीक्षण किया और प्रण किया कि इस भयङ्कर बरबादी को रोकूँगा। गुरु समझते थे कि झगड़ा दोनों की भूल से होता है, यदि एक पक्ष को भी सुधार दिया जाय तो कलह उसी दिन समाप्त हो सकता है। एक हाथ से ताली कहीं भी बजती नहीं देखी गई।

गुरु जी राजा के पास पहुँचे। वे जानते थे कि कि अपराध मन्त्री का है और राजा निर्दोष है, फिर भी उन्हें शास्त्रज्ञान से यह अनुभव था कि बुद्धिमान को ही झुकाया जा सकता है। उन्होंने राजा को समझाया कि दण्ड देने की नीति बाहर के नौकर-चाकरों पर चलनी चाहिए। मन्त्री से कलह होने में हर प्रकार आपकी ही हानि है। यदि इस राज्य व्यवस्था को सुरक्षित रखना है, तो आपको ही अधिक त्याग करना पड़ेगा।

राजा बड़ा सुशील और साधुवृत्ति का था। उसने गुरु की आज्ञा मान कर अधिकाधिक त्याग का आदर्श स्वीकार कर लिया। उसने राज का सारा भार मन्त्री को सोंप दिया, अपना सारा विरोध छोड़ दिया, उसके दुष्ट आचरणों पर दृष्टि रखना छोड़ दिया, यहाँ तक कि मन में से घृणा और विरोध के भाव भी निकाल दिये। राजा ने सोच लिया कि हर प्राणी अपने कर्म का स्वतंत्र रूप से जिम्मेदार है, मन्त्री कुकर्म करता है तो मैं क्यों

मोह में दुःख

(डा० शिवरतनलाल त्रिपाठी, गोलागोकरन नाथ)

रामनगर के एक शाहजी ने एक सफेद चूहा पाल रक्खा था। उसे वे बड़े प्यार से खिलाते-पिलाते तथा देख-भाल किया करते थे। शाहजी जब दूकान पर जाते, तो उसे अपने ही साथ ले जाते और जब वे दूकान से घर लौटते, तो उसे भी लौटा लाते थे। शाहजी की दूकान आटा दाल की थी। उनकी दूकान में चूहे बहुत पैदा हो गये थे इसलिये चूहों के मारने के वास्ते शाहजी ने एक बिल्ली पाल ली। जब बिल्ली बड़ी हुई, तब दूकान के चूहों का शिकार करने लगी, ४-६ चूहे नित्य मारकर खा जाती थी। शाहजी उसके चूहा पकड़ने पर बड़े प्रसन्न होते थे।

एक दिन की बात है कि बिल्ली को शिकार करने के लिये एक भी चूहा न मिला। बिल्ली भूखी थी, उसे अपने-बिराने का ज्ञान तो था ही नहीं। उसने झट शाहजी का पाला हुआ सफेद चूहा मारकर खा लिया। शाहजी अब करते क्या, देखते ही रह गये। जब बिल्ली को मारने दौड़े, तब वह भाग गई। शाहजी दुःख में निमग्न बैठे कुछ सोच रहे थे कि इतने में उधर से गुरु महाराज आ निकले। शाहजी को चिन्तित देखकर बोले कि क्यों क्या हुआ? कुशल तो है! शाहजी बोले—महाराज, वैसे तो आपकी कृपा से सब कुशल-मङ्गल है, परन्तु मेरे एक पले हुए सफेद चूहे को बिल्ली खा गई। गुरुजी ने कहा कि जब तुमने चूहा पाला था तो फिर बिल्ली क्यों पाल ली? शाहजी ने कहा कि मैंने तो बिल्ली को दूकान के चूहों को मारने के वास्ते पाली थी। महात्मा जी ने कहा कि क्या और चूहों में जान नहीं थी? तब शाहजी बोले—हुआ करे जान, मुझे क्या, मुझे तो इसी चूहे से प्रेम था। मैंने इसे बड़ी मुहब्बत से पाला था। तब महात्मा जी ने कहा कि भाई तुम्हारे दुःख का कारण चूहा नहीं है, बल्कि ममता है (यह मेरा है) ऐसा भाव। शाहजी ने कहा, हाँ महाराज! तो महात्मा जी ने कहा कि संसार की समस्त वस्तुएँ नाशवान हैं और प्रत्येक प्राणी को मृत्युरूप बिल्ली अवश्य खायेगी। यदि तुम सांसारिक पदार्थों में ममता करोगे तो दुख से सताये जाओगे। इन पदार्थों और स्त्री, पुत्र, धन आदि की ममता (मोह) छोड़ कर्त्तव्य को धैर्य के साथ पालन करो और सब में आत्मवत् वर्तो, तभी दुख से छुटकारा पा सकोगे।

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवभूत् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनु पश्यतः॥

जिस ज्ञानी मनुष्य की दृष्टि में सब प्राणी अपनी आत्मा के तुल्य हो जाते हैं, उसको फिर शोक, मोह नहीं होता।

अपना जी जलाऊँ। राजा पहले ही बड़ा नम्र था, इन त्याग भावनाओं के स्वीकार करते ही वह और भी अधिक नम्र बन गया। पहले उसे मोह था, अब प्रेम को सीख लिया। प्रेम की अमृतमयी गङ्गा उसके मन, कर्म और वचक में से कल-कल करती हुई झरने लगी।

निःस्वार्थ प्रेम में बड़ी ही गजब की आकर्षण शक्ति है। मन्त्री इस दिव्य तेज के आगे ठहर न सका और पिघल कर पानी-पानी हो गया। दूसरे नौकर चाकर जो अपनी घात लगाया करते थे, अपना दुःस्वभाव भूल गये। मन्त्री की दुष्ट वृत्तियाँ मरी नहीं थीं, पर एक ओर से लड़ाई भी नहीं हो सकती। सारा मामला शान्त होगया। नष्ट होने वाला राज्य बच गया और उजड़ने वाली फुलवारी ज्यों की त्यों रह गई।

गुरु जी प्रसन्नता पूर्वक विदा हो रहे थे। विदाई के समय बहुत भीड़ उनके साथ थी। लोगों ने पूछा महाराज ऐसे ही कलह जब हमारे घरों में हो तो हमें क्या करना चाहिए? गुरु जी ने सब को उपदेश दिया कि—पुत्रो! त्याग और प्रेम का महत्व समझो। इन दो तत्वों के अन्दर बड़ी से बड़ी कठिनाइयों को जरा सी देर में हल करने की अद्भुत शक्ति भरी हुई है।

स्वप्नों की सचाई

(ले० श्री. रामभरोसे पाठक, नदी गांव, दतिया स्टेट)

आजका सभ्य समाज स्वप्नका अस्तित्व मानने को तैयार नहीं है। उनका विचार है, कि जो हम दिन में देखते हैं तथा जिन विचारों का हमारे हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ता है वस्तुतः वही विचार स्वप्न का रूप लेकर रात्रि में अवतरित होते हैं, दूसरे शब्दों में स्वप्न हृदयांकित विचारों की श्रृंखला है। सर्वथा नहीं तो कुछ आंशिक भावों में उनकी यह धारणा है भी ठीक। क्योंकि हम, प्रायः उन ही स्वप्नों को देखा करते हैं जिनको कार्य्य रूप से दिन में देखते हैं जैसे बालक स्वप्न देखेगा तो खेलने का। अमुक लड़का मेरे पीछे दौड़ रहा है, अमुक लड़का मुझे मारने दौड़ा है, मेरी पतंग अमुक लड़का छीने लिये जा रहा है" इत्यादि या कभी-कभी पाठशाला के विषय में भी। सिवाय इन कामों के और उनके पास धरा ही क्या। इन विचारों का रात्रि में इस प्रकार तांता लग जाता है कि कभी-कभी आवेश में आकर जोर-जोर से पुकारने लगता है, किन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि वह ऐसे स्वप्न देखा करते हैं जिनको न तो वैसा विचार सकते थे और न कभी देखे थे ऐसे थे। यह स्वप्न बड़े विचित्र होते हैं।

हमारे पूर्वज ऋषि, मुनियों ने इनका पर्याप्त अन्वेषण किया था, उन्होंने स्वप्नों के वर्ग किये, उन्हें समयानुसार भिन्न-भिन्न फलदाता कहा, इस विषय पर ग्रन्थ रचना भी की गई, उनके प्रतिपादन से यह सिद्ध नहीं होता कि स्वप्न केवल "हृदयांकित विचारों की श्रृङ्खला है" अपितु वे तो उसे अशुभ सूचक तथा अमुक फलदाता भी कहते हैं। वे उसे भविष्यकी अनिष्ट तथा इष्ट स्वरूपिणी चेतावनी कहते हैं। तथा उस से भविष्य की झलक देखते हैं वे वर्षों व महीनों के आने वाले भविष्यन् फल का आज रात्रि से तारतम्य होना बतलाते हैं। आधुनिक समय के मनोविज्ञान विशारदों ने भी सिद्ध कर दिखाया है कि स्वप्न केवल विचारों की सारहीन श्रृङ्खला ही नहीं है, अपितु वे सुस्पष्ट तथा सच भी होते हैं। उन से वैज्ञानिक लोग कई प्रकार के अनुमान निकालने लगे हैं तथा कथित अनुमान ठीक भी होते हैं।

स्वप्न को सारहीन विचार श्रृङ्खला कह कर नहीं टाला जा सकता। उसमें कुछ तथ्य अवश्य है। उसमें हमारे जीवन संघर्ष की छाया मात्र अवश्य निहित रहती है, स्वप्न हमें सुमार्ग पर लाने का प्रयत्न करता है। भगवान् अन्तर्यामी हमें अपने भविष्य के बारे में तथा आगे आने वाली आपदाओं के विषय में चेतावनी करते हैं। वर्तमान परिस्थिति में दूरस्थ कुटुम्ब के आपद ग्रस्त होने का संकेत करते हैं, हमारे प्रिय भाजन पर आने वाली आपत्तियों का विश्लेषण करते हैं, हमारी यात्रा पर भी दृष्टि डालते हैं।

मेरा यह स्वयं का अनुभव है कि जब मैं एक विशेष प्रकार का स्वप्न देखता हूँ तो मैं निश्चित् दिनों में शरीर से अस्वस्थ हो जाता हूँ तथा एक पूर्व निश्चित् अवधि के उपरांत स्वास्थ्य लाभ करता हूँ। मैं अपने ऊपर आने वाली आपदाओं का भी विचार कर लेता हूँ। अपने कुटुम्ब के किसी प्राणी पर कोई आने वाला कष्ट भी मालूम कर लेता हूँ। कुछ वर्ष हुए मैं बाहर गया था, एक रात को मैंने स्वप्न देखा कि घर पर माता जी की अंगुली में एक फोड़ा हो गया है इसी से वे बहुत दुखी हैं। सुबह होते ही मैंने झट से घर को प्रस्थान कर दिया। घर जाकर जो देखा वास्तव में माताजी की अंगुली में एक फोड़ा उठ आया है और उससे वे दुखी हैं तथा मेरी बड़ी याद कर रही हैं और मेरे बुलाये जाने का अनुरोध कर रहीं हैं, तभी तक मैं पहुँच गया। ऐसे एक बार क्या कई बार हुआ और स्वप्न स्पष्ट हुआ तथा फलित भी।

विरोधी से सद्व्यवहार

यूनान के प्रसिद्ध तत्वज्ञानी पेरीकिल्स से किसी बात पर अप्रसन्न हो कर एक व्यक्ति उसके घर बुरा-भला कहने गया। क्रोध में वह पागल हो रहा था, जाते ही उसने बड़बड़ाना और गालियाँ देना शुरू किया। पेरीकिल्स चुपचाप उसकी बातें सुनते रहे, फिर भी उसका क्रोध शान्त न हुआ और दोपहर का आया हुआ दिन डूबने तक वाक्य-बाणों की वर्षा करता रहा। जब अँधेरा हो गया तो वह थक कर चूर हो गया और उठ कर चलने लगा। पेरीकिल्स ने धीरे से अपने नौकर को बुलाया और कहा—लालटेन लेकर इन महाशय के साथ चले जाओ और इनके घर तक पहुँचा दो।

शुक्राचार्य एक बार श्री कृष्णजी पर बड़े नाराज हुए और उन्हें इतना क्रोध आया कि उनकी छाती पर जोर की लात मारी। श्री कृष्ण जी ने शुक्राचार्य के पाँव सहलाते हुए पूछा—भगवन्! आपके चरणों को मेरी छाती से चोट तो नहीं लगी?

विरोधियों के साथ सहिष्णुता का व्यवहार करने से न केवल विरोध दूर हो जाता है, वरन् विरोधी उलटा एक बंधन में बँध जाता है। प्लेटो कहा करता था—"सब से बड़ी जीत विरोधी के हृदय को जीत लेना है।"

जगद्गुरु श्री स्वामी शंकराचार्य को भगवान परम पिता ने स्वप्न में ही वैराग्य धारण करने का उपदेश किया था। स्वामी जी ने उसे शिरोधार्य किया, जो आगे चल कर जैसा फलित हुआ, विज्ञ-जनों के समक्ष है। महात्मा राजकुमार सिद्धार्थ को स्वप्न में ही वैराग्यज दृश्य दिखाई दिये, जिससे उन्हें संसार से घृणा हो गई थी और संसार छोड़ कर वैराग्य ले लिया, जो आज दिन भी उनका नाम अजर अमर है। श्री विवेकानन्द जी को भी कुछ स्वप्न में ही उपदेश हुआ बतलाया जाता है। यदि स्वप्न कोरी विचारशृङ्खला ही है, तब फिर यह बातें सच कैसे! बस एक बात है, यदि स्वप्न घोर निद्रा में तथा शुद्ध हृदय से हुआ तो सम्भव हो सकता है और फिर भगवान की इच्छा। परन्तु वे परम पिता परमेश्वर हमें यदा कदा सुमार्ग प्रदर्शन कराते हैं, किन्तु उस मार्ग पर अनुगमन करना हमारे मन पर अवलम्बित है।

सन्तों के लक्षण।

(तुलसी कृत रामायण से)

सन्तन्ह के लक्षण सुन भ्राता।
अगणित श्रुति पुरान विख्याता॥
सन्त असन्तन कै असि करणी।
जिमि कुठार चन्दन आचरणी॥
काटै परसु मलय सुनु भाई।
निज गुण देह सुगन्ध बसाई॥

दो०—ताते सुर शीशन्ह चढ़त, जग वल्लभ श्रीखंड।
अनल दाहि पीटत घनहि, परसु बदन यह दंड॥

विषय अलंपट शील गुणाकर।
पर दुख दुःख, सुख सुख देखे पर॥
सम अभूत रिपु बिमद विरागी।
लोभामर्ष हर्ष भय त्यागी॥
कोमल चित दीनन्ह पर दाया।
मन वच क्रम मम भक्ति अमाया॥
सबहिं मान प्रद आपु अमानी।
भरत प्राण सम ममते प्रानी॥
बिगत काम मम नाम परायन।
शान्ति विरति विनति मुदितायन॥
शीतलता सरलता मइत्री।
द्विज पद प्रीति धर्म जनयित्री॥
ये सब लक्षण बसहिं जासु उर।
जानउ तात संत सन्तत फुर॥
सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं।
परुष वचन कबहु नहिं बोलहिं॥

दो०-निन्दा अस्तुति उभय सम, ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्राण प्रिय, गुण मंदिर सुख पुंज॥

परलोक विद्या के प्रचार की कठिनाइयां

(ले०-परलोक विद्या के आचार्य श्री. डी. ऋषि,बम्बई)

मरणोत्तर अवस्था का ज्ञान महत्वपूर्ण होते हुए भी उसके प्रचार में कई प्रकार की कठिनाइयों का अनुभव आता है। अन्य बातों के प्रचार-कार्य में और इसमें यह विशेषता रहती है कि लोग हमेशा इस विषय में प्रत्यक्ष प्रमाण अथवा प्रयोगों की अपेक्षा करते हैं। उन्हें यह खबर नहीं रहती कि परलोकगत व्यक्तियों से संवाद शक्य है किन्तु टेलीफोन के अनुसार वह सहज नहीं है, यदि ऐसा होता तो उसके प्रचार की कोई आवश्यकता नहीं होती। विरह दग्ध अथवा अन्य जिज्ञासु अपने संतोष के लिये इस स्थान की अपेक्षा करते हैं किन्तु उन्हें परलोक विद्या के तत्वों का तथा प्रयोगों की कठिनाइयों का परिचय नहीं रहता, इस अवस्था में उनके साथ प्रयोग करना दुर्घट होता है।

प्राय' प्रचारकों से प्रयोगों की भी अपेक्षा की जाती है। साधारण लोगों का यह ख्याल रहता है कि प्रचारक को प्रयोग भी करके अपने वचनों की अथवा अनुभवों की सत्यता सिद्ध करनी चाहिये। उनको यह विदित नहीं रहता कि प्रचारक माध्यमिक शक्तियुक्त हो तो ही उससे यह कार्य हो सकेगा, सुविख्यात सर आर्थर कोनन डाईल सरआं लिहर लाज आदि विद्वान स्वयं माध्यम नहीं थे, तो भी उन महानुभावों ने इस विद्या का प्रसार समस्त संसार में किया। जहां २ वे गये वहां लोगों ने उन से प्रयोगों की अपेक्षा नहीं की उन्होंने अपने अनुभव लोगों को बतलाये, इसके तत्व तथा उपयुक्तता समझा दी जिससे परलोक विद्या के तरफ जनता का ध्यान आकर्षित हुआ, किन्तु हमारे देश में भिन्न प्रकार के अनुभव आते हैं। उपर्युक्त सज्जनों के उदाहरण से लोगों के प्रचारकों के कार्य की कल्पना आ सकेगी।

यह भी देखा गया है कि कई प्रसिद्ध लोग परलोक ज्ञान का पूरा अनुभव आने पर भी उन्हें प्रसार करने को तैयार नहीं होते। यह विद्या अभी तक लोक सम्मत न होने से वे अपने अनुभव सार्वजनिक रीति से प्रकट करने में वे हिचकिचाते हैं। स्वयं लाभ उठाकर दूसरे को उसका कुछ भी अंश न देना यह स्वार्थता है। इसलिये हर एक परलोक विद्या प्रेमी का यह परम पवित्र कर्त्तव्य है कि वह अपने अनुभव लोगों को कहे और इस ज्ञान का प्रसार करे इसी से ही यह ज्ञान सर्व सम्मत होगा।

इसके अलावा द्रव्यैक दृष्टि से अपने को महान् 'सायकिक' या 'स्पिरिच्युअलिस्ट' ऐसा कहकर वर्तमान पत्रों से प्रकाशित करके लोगों का चित्त आकर्षित करते हैं, इन 'सायकिक' ब्रुच लोगों का हेतु इस विद्या का प्रसार करना नहीं होता, वे स्वयं इस ज्ञान को भी यथार्थतः नहीं जानते, केवल द्रव्य सम्पादन करना यही उनका उद्देश्य रहता है, और लोग बड़े २ इश्तिहारों से वंचित होकर इस ज्ञान को ही ढोंगबाजी समझते हैं, सत्य अनुभव देने पर द्रव्य की अपेक्षा करना कोई भी अनुचित नहीं रहेगा, हर एक मनुष्य को अपने समय और कष्ट का बदला मिलना चाहिये किन्तु केवल इश्तिहार देकर द्रव्य संपादन करने की लालसा करना सर्वथा अनुचित है।

परलोक का अस्तित्व सब धर्मों को आवश्यक तथा पोषक होकर भी धर्म प्रवीण लोग इस विद्या को भूत विद्या संबोधित करके इससे अलग रहते हैं, इसी मुताबिक वैज्ञानिक भौतिक शास्त्र के समान अन्वेषण करके अपने अनुभवों का लाभ जनता को नहीं देना चाहते हैं, इस कारण से इस विद्या का प्रसार होने से कठिनाई पड़ती है।

कई लोग केवल स्वार्थ बुद्धि से ही यह प्रयोग देखना अथवा करना चाहते हैं। उनको इस विद्या

मानसिक शक्तियों के स्थान

(अखंड ज्योति कार्यालय से प्रकाशित 'बुद्धि बढ़ाने के उपाय' पुस्तक के कुछ पृष्ठ)

शवच्छेदन और प्रत्यक्ष शरीर विज्ञान द्वारा मस्तिष्क के सम्बन्ध में अभी बहुत कुछ जानकारी प्राप्त की जा सकी है। मस्तिष्क की बनावट उसकी पेशियों और तन्तुओं की रचना के सम्बन्ध में डाक्टर लोग कुछ ज्ञान रखते हैं, किन्तु वे अभी तक यह भी पता नहीं लगा सके कि श्वेत बालुका और भूरा पदार्थ (ग्रे मैटर) क्या काम करते हैं और यह महत्वपूर्ण पदार्थ किस कार्य के लिये निर्मित हैं।

मानसिक शक्तियों का सूक्ष्म अन्वेषण करनेवाले वैज्ञानिकों ने अपना कार्य स्थूल रचना तक ही सीमित न रख कर यह भी पता लगाया है, कि किन शक्तियों की सूक्ष्म सत्ता मस्तिष्क के किन भागों में रहती है और किस प्रकार उनके द्वार- विभिन्न कार्य व्यापार संचालित किये जाते हैं।

नीचे के चित्र में मस्तिष्क की विभिन्न शक्तियों के स्थानों का निरूपण किया गया है। यों तो इससे भी अधिक सूक्ष्म शक्तियाँ होंगी, पर चिरकालीन खोज के पश्चात् जिन शक्तियों के स्थानों का निश्चित रूप से ज्ञान प्राप्त हो सका है, इसमें केवल उन्हीं का उल्लेख किया गया है।

का अन्तिम ध्येय तथा महत्व की कल्पना भी नहीं रहती और वे उसे जानना भी नहीं चाहते, ऐसे लोगों से प्रचार कार्य की अपेक्षा करना व्यर्थ है। अपना स्वार्थ पूर्ण होने पर वे इस ज्ञान का विचार भी नहीं करते हैं और न उनसे उस प्रकार की शक्ति तथा बुद्धि रहती है, इसी प्रकार के लोगों की बहुत संख्या होने से प्रयोग कर्त्ताओं को उनके सन्तोष के लिये ही प्रयोग करना पड़ते हैं।

उपयुक्त विवेचन से इस विषय की कुछ कठिनाइयों की कल्पना पाठकों को आकर वे उन्हें दूर करने से यथा शक्ति दत्त चित्त होंगे ऐसी आशा है।

चित्र के अनुसार पाठक शक्तियों का स्थान जान लेंगे। इसमें दांई बांई ओर का विभाजन नहीं है। यह दोनों ही ओर से समझी जा सकती है। एक सीध में एकही शक्ति आर-पार चली गई है। वह बीच में टूट कर अधूरी नहीं रही है, जिससे कि दांए बांए ओर की भिन्नता की आशङ्का हो। यदि निर्धारित स्थान पर एक पिन चुभोई जाय और वह आर-पार हो जाय, तो उसके एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक का स्थान उसी एक शक्ति का होगा।

अब विभिन्न शक्तियों के व्यापारों पर कुछ प्रकाश डाला जाता है:—

(१) वाग्व्यापार शक्ति—जिह्वा द्वारा इसी से बोलने, बात-चीत करने, गाने-बजाने की क्रियायें होती हैं। (२) रूप ग्रहण शक्ति—नेत्रों द्वारा यही

शक्ति रंग, रूप का अनुभव करती है। (३) प्रमाण ग्रहण शक्ति—छोटे, बड़े, लम्बे, चौड़े, ऊंचे नीचे का बोध इससे होता है। (४) गुरुता ग्रहण शक्ति—भारी हलके का ज्ञान इसी से होता है। (५) व्यवस्था ग्रहण शक्ति—वस्तुओं की स्थिति का इससे निर्णय होता है। (६) वर्ण ग्रहण शक्ति—रंग और जातिकी पहचान करती है। (७) संख्या ग्रहण शक्ति—संख्या का बोध कराती है। (१०) अविभाव शक्ति—विरोधी भावनाऐं। (११) वृत्तान्त ग्रहण शक्ति—किसी समाचार की क्रमबद्ध धारणा कराती है। (१२) स्थान ग्रहण शक्ति—स्थान के बारे में जानकारी होती है। (१३) समय शक्ति—समय का भेद जानने वाली। (१५) राग ग्रहण शक्ति—ध्वनि, नाद, सङ्गीत का अनुभव कराने वाली। (१५) रचना शक्ति-निर्माण करने—बनाने की योग्यता। (१६) उपाजन शक्ति—भावों को उत्पन्न करने वाली। (१७) पोषण शक्ति—उत्पन्न विचारों को पुष्ट करने वाली। (१८) काव्य शक्ति—कवित्व योग्यता। (१६) सुप्रतिक ग्रहण सत्ता—आदर्श निर्माण योग्यता। (२०) आमोद शक्ति—प्रसन्नता, मनोरंजन का स्थान। (२१) न्याय शक्ति—न्याय अन्याय की बोधक है। (२२) उपमान शक्ति—दो वस्तुओं की तुलना करने की योग्यता। (२३) मनुष्यत्व शक्ति—इंसानियत, मानव धर्म की प्रोत्साहक। (२४) नम्रता शक्ति—स्वभाव को मधुर विनयी बनाने वाली। (२५) उपक्रान्ति शक्ति—हृदय की उदारता। (२६) अनुवर्तन शक्ति—नकल करने की शक्ति। (२७) भक्ति शक्ति—श्रद्धा, भक्ति की उत्पादक। (२८) आत्म-ज्ञान शक्ति—आध्यात्मिक विकास करनेवाली। (२६) दार्ढ्य शक्ति-दृढ़ रहने की शक्ति। (३०) आशा शक्ति आशा को बढ़ाने वाली। (३१) अंतःकरण शुद्धि शक्ति—विचारों को निर्मल, पवित्र और उच्च कोटि के बनाने वाली। (२) रुचिकर शक्ति—किसी कार्य में दिलचस्पी, प्रेम उत्पन्न करने वाली। (३३) सावधान शक्ति—होशियारी, जागृति की उत्पादक। (३४) गोपन शक्ति—किसी बात को मन से छिपाये रहने की योग्यता। (३५) विनाशात्मक शक्ति—नष्ट करने, तोड़ने, बिगाड़ने मारने की इच्छा। (३६) अपरिच्छेद शक्ति—लगातार जुटे रहने की शक्ति। (३७) निवासानुराग शक्ति—रहने के स्थान सम्बन्धी दिलचस्पी। (३८) मैत्री शक्ति—दो प्राणियों के बीच मित्रता की उत्पादक। (३६) पितृ प्रेम सत्ता—अपने पूर्वजों, संरक्षकों के प्रति अनुराग। (४०) सम्मेलन शक्ति—मिलने जुलने, बहुत आदमियों के बीच रहने का स्वभाव। (४१) शौर्य शक्ति—बहादुरी, वीरता की जननी। (४२) आम गौरव शक्ति—स्वाभिमान की योग्यता। ४३) प्राण स्नेह शक्ति—अपने प्राणों का मोह। (४४) छोटे और निर्बलों पर कृपा, वात्सल्य।

पाठक जान गये होंगे कि मस्तिष्क में किस प्रकार की योग्यता का स्थान कहाँ है।

जिस शक्ति को विकसित करना हो, उसके स्थान पर निम्न उपायों का प्रयोग करना चाहियेः—

(१) शान्त चित्त से एकान्त स्थान में बैठकर मस्तिष्क के नियत भाग में चन्द्रमा के समान शीतल ज्योति का ध्यान किया कीजिये।

(२) मस्तिष्क के नियत स्थान पर दांये और बांये दोनोंओर अनामिक, मध्यमा और तर्जनी उङ्गलियों के छोर रखकर इस प्रकार की दृढ़ भावना किया कीजिये। "इस स्थान पर स्थित अमुक शक्ति का विकास हो रहा है। यहां के कोष सतेज और सूक्ष्म होकर विशेष रूप से मेरा मस्तिष्क प्रतिक्षण परिपूर्ण होता जा रहा है।"

(३) नियत स्थान पर जलकी धारा छोड़नी चाहिये।

(४) ब्राह्मी, आँवला या सरसों के तेल की मालिश करनी चाहिये।

(५) नियत स्थान पर नीले कांच द्वारा घृत के दीपक का प्रकाश पहुँचना चाहिये। इसके लिये एक लालटेन ऐसी बनवानी चाहिये, जो सब ओर से बन्द हो और सामने एक छोटासा गोल नीला कांच लगा हो। लालटेन के भीतर घृत का दीपक रखकर उसका प्रकाश दो फुट की दूरी से उस भाग पर पहुँचाना चाहिये। (अपूर्ण)

प्रेतात्मा का दर्शन

इङ्गलेण्ड के सुविख्यात व्यक्तियों में बहुत ऊँचा स्थान रखने वाले लार्ड ब्रुहम उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग में उज्ज्वल नक्षत्र की तरह चमक रहे थे। अगाध विद्या और तीव्र बुद्धि ने उनकी सम्पन्नता में चार चाँद लगा दिये थे। वे जैसे अद्वितीय बैरिस्टर थे, वैसे ही सूक्ष्मदर्शी दार्शनिक और वैज्ञानिक थे। श्री और धी दोनों की ही उन पर परिपूर्ण कृपा थी।

लार्ड ब्रुहम की डायरी में एक ऐसी घटना का उल्लेख मिला है, जिसके आधार पर मनुष्य के मरणोत्तर जीवन पर कुछ प्रकाश पड़ता है। वे लिखते हैं—"ता० १९ दिसम्बर को कड़ाके की ठंड थी, मैं स्वीडन के बर्फीले प्रदेशों में घूम कर लौटा था। कुछ गरमाने की इच्छा से स्नानागार में गया और गरम पानी से भरे हुए टब में बैठ कर गर्मी का आनन्द अनुभव करने लगा। सामने कुर्सी पर पहनने के लिए सूखे कपड़े रक्खे हुए थे। जब स्नान कर चुका तो मैंने चाहा कि उठकर कपड़े पहन लूँ। सामने कुर्सी पर निगाह गई तो एक बड़ी विचित्र बात देखने में आई। मेरा बाल्य सखा जार्ज कुर्सी पर बैठा हुआ था। मुद्दतों से हजारों मील दूरी के प्रवास में रहने वाला यह जार्ज मेरे बन्द स्नानागार में अचानक क्यों कर आया? इस प्रश्न ने मुझे सन्न कर दिया। वह मेरी ओर स्थिर दृष्टि से देख रहा था। मुझे भय और कँपकपी का अनुभव हुआ और अचेत हो गया।"

"जब मुझे होश आया तो देखा कि मैं टब से बाहर पड़ा हुआ हूँ। अपने को सँभाल कर कपड़े पहने और बाहर आया। चूँकि मैं सदा से तर्क-प्रिय रहा हूँ, इसलिए सोचने लगा शायद किसी अज्ञात कारण से मैं निद्रित हो गया होऊँ और सपना देखा हो। इस प्रकार की और भी कई कल्पना कीं, पर कुछ सन्तोष नहीं हुआ, क्योंकि जिस समय मैंने वह दृश्य देखा था, उस समय बिलकुल सावधान होने का मुझे अच्छी तरह स्मरण है और यह भी स्मरण है कि मूर्ति को कई बार आँखें मल-मल कर तर्क और परीक्षण की दृष्टि से देखा था। जो हो, मैंने इस घटना को याददाश्त की पुस्तक में नोट कर लिया।"

कुछ ही दिन बीते थे कि हिन्दुस्तान से मेरे पास एक पत्र आया, जिसमें लिखा हुआ था कि—"ता० १९ दिसम्बर सन् १७९९ ई० को जार्ज का स्वर्गवास हो गया।" अब मुझे जार्ज के सम्बन्ध में एक बहुत पुरानी स्मृति याद आई। एडिनबरा स्कूल की पढ़ाई छोड़ कर जब मैं विश्वविद्यालय में प्रविष्ट हुआ था, तो जार्ज भी मेरे साथ था। हम दोनों एक ही कक्षा में पढ़ते थे और आपस में बड़े प्रेम सूत्र में बँध गये थे। जब हम दोनों साथ-साथ घूमने जाते, तो विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद किया करते थे। इन आलोच्य विषयों में ईश्वर और आत्मा का प्रश्न प्रमुख रहता था। एक दिन हम दोनों ने एक प्रतिज्ञा लिखी कि—"अगर मृत्यु के उपरान्त कोई आत्मा नाम की वस्तु शेष रहती हो, और वह आत्मा जीवित मनुष्यों के सम्मुख प्रकट होने की योग्यता रखती हो, तो हम दोनों में से जो पहले मरेगा, वह दूसरे को दर्शन देकर सन्देह निवारण करेगा।" इस प्रतिज्ञा-पत्र पर हम दोनों ने अपने शरीर में से खून निकाल कर हस्ताक्षर किये।

समय के प्रवाह ने कालेज की पढ़ाई के बाद हम दोनों को एक दूसरे से बहुत दूर कर दिया। जार्ज हिन्दुस्तान चला गया और वहीं किसी नौकरी पर चिपक गया। बरस दो बरस हम दोनों का पत्र व्यवहार रहा, पीछे दोनों ही भूल गये। कम से कम मुझे तो पिछले पन्द्रह वर्ष में कभी भी स्मरण नहीं आया था। अचानक उसकी छाया मूर्ति देखने और उसके बाद मृत्यु समाचार सुनने से यह पूर्व प्रतिज्ञा स्मरण हो आई है।

दुष्टों से भी प्रेम कीजिए

आप किसी से भी घृणा मत कीजिए, कर्म का मार्ग बड़ा गहन है, शायद आप ही भले बुरे की पहचान करने में भूल कर रहे हों। कई बार जिनके कार्य अप्रिय दिखाई देते हैं, वे धर्म करते हैं और उत्तम काम करने वाले पापी। क्यों कि कर्म की भलाई बुराई का परीक्षण उसके बाह्य रूप से नहीं, वरन् कर्त्ता की आन्तरिक भावना से किया जाता है। आप सर्वज्ञ नहीं हैं जो हर एक की आन्तरिक भावनाओं को जान सकें, फिर बिना सबूत, अन्दाज़ के आधार पर किसी को फाँसी क्यों देना चाहते हैं। बुरों के साथ भी बुराई मत कीजिए, क्यों कि बुराइ से बुराई की ही वृद्धि होगी। मैले कपड़े को काजल से नहीं, साबुन से धोना चाहिए। दुष्टों को लाठी से नहीं, वरन् प्रेम से वश में करना चाहिए। बुरे आदमियों को ऐसी मार मारिये, जिससे साँप मरे न लाठी टूटे।

हाय! कितने दुःख की बात है कि मनुष्य इन्द्रिय विकारों की तुच्छ तृष्णा के पीछे जीवन भर भटकता रहता है और स्वार्थों की सङ्कीर्ण चहारदीवारी में बन्द रह प्रेम जैसे अमृत तत्व का आनन्द लेने से वंचित रह जाता है। प्रलोभन और अज्ञान के बादलों में सत्य के सूर्य को नहीं देख पाता। भूल और भ्रम इन्हीं दो निरर्थक वस्तुओं से जैसे-तैसे मन को बहलाता रहता है और अन्त में यों ही खाली हाथ यहाँ से विदा होजाता है।

आप कहते हैं कि, दुष्ट और दुराचारियों से मैं कैसे प्रेम करूँ? इनके लिए तो मेरे मन में घृणा और रोष के भाव भरे हुए हैं। आप अपने इस कथन पर पुनर्विचार कीजिए और सोचिए कि, क्यों आप उनसे घृणा करते हैं? दुष्ट लोग देखने में भले ही हृष्ट-पुष्ट और बुद्धिमान प्रतीत होते हैं, यथार्थ में वे एक प्रकार के रोगी हैं और अज्ञान एवं मानसिक व्याधियों के कारण अन्धे बने हुए हैं। उन्हें अपना सत्पथ दिखाई नहीं पड़ता। इन्द्रिय विकारों और प्रलोभनों ने उन्हें ऐसा जकड़ रखा है कि बेचारे सिर नहीं उठा सकते। इसलिए सब से अधिक दया के पात्र यही हैं और इन्हें ही आपकी सबसे अधिक आवश्यकता है। अस्पताल का डाक्टर कुछ देर के लिए चुपचाप पड़े हुए मरीजों की तरफ से बेखबर हो सकता है, किन्तु जो रोगी सन्निपात से ग्रसित है, ऊट-पटांग बातें बकता है, चारपाई पर से उठ-उठ कर भागता है एवं अपना भला बुरा सोचने की शक्ति गँवा देने के कारण चाहे जो कुछ उचित अनुचित करने को व्यग्र हो रहा है, उसकी ओर अधिक ध्यान देगा। डाक्टर जानता है कि यह उपद्रव व्यक्ति के नहीं, वरन् रोग के हैं। वह रोग दूर करने का प्रयत्न करता है, रोगी को मार डालने का नहीं। वह उसके उद्धत कार्यों पर ध्यान नहीं देता, क्यों कि रोगी की बेहोशी और रोग के उग्र दवाब का उसे ज्ञान है। डाक्टर गालियाँ सुनता जाता है, फिर भी उसका प्रेम-पूर्वक इलाज करता है। आप कैसे प्रेमी हैं जो पीड़ितों और अज्ञानियों

इस आकस्मिक घटना से अब मेरे एक चिरकालीन उलझन का समाधान होगया कि मरने के बाद आत्मा का अस्तित्व रहता है या नहीं।"

लार्ड ब्रुहम के अनुभव में आई हुई यह घटना रेवेण्डर फेडरिक जार्जली की (Glimpses of the Supernatural) नामक ग्रन्थ में तथा एक दूसरी पुस्तक (Phantasms of the Living) में विस्तार पूर्वक वर्णित किया है।

से घृणा करते हैं ? आप कैसे डाक्टर हैं, जो रोग और रोगी दोनों को ही मार डालना चाहते हैं। आप मत सोचिए कि अमुक व्यक्ति को मैं दण्ड दूंगा। ऐसे अप्रिय कार्य को आप क्यों हाथ में लेते हैं। दण्ड देने वाला मौजूद है। हत्यारे को सजा देने के लिए अदालतें, कानून की धाराएँ और फाँसीघर सुव्यवस्थित रूप से मौजूद हैं। वहाँ किसी के साथ पक्षपात नहीं होता, फिर आप ही जल्लाद का कार्य करने को क्यों उतावले हो रहे हैं ? ठहरिए, जल्दी मत कीजिए, आपका कार्य दूसरा है। आप डाक्टर हैं, अपने अस्पताल में आये हुए मरीजों का इलाज कीजिए। बलवे के घायलों को अच्छा करने का प्रयत्न करना ही आपका कर्त्तव्य है। इनके भले बुरे कर्मों के लिए अदालत खुद इनसे निपट लेगी और वही हो जायगा जो आप चाहते हैं।

अपने को निस्पक्ष, उदार एवं पवित्र बनाइए, सत्य के मार्ग पर आरूढ़ हूजिए, क्योंकि इसी से अनन्त प्रेम को प्राप्त किया जा सकता है और असीम प्रेम को प्राप्त कर लेना जीवन के चरम उद्देश्य को प्राप्त कर लेना है।

जीवन में केवल अवस्था-भेद ही से नहीं, प्रत्युत अवस्थानुसार कर्त्तव्य-पालन करने से श्रेय मिलता है।

× × ×

स्वतन्त्र और निष्पक्ष वाद-विवाद सत्यता के दृढतम मित्र सिद्ध होते हैं।

× × ×

७—मनुष्य का मूल्य तथा उसकी वीरता उसके हृदय एवं सङ्कल्प पर अवलम्बित हैं, इसी में सच्ची मर्यादा का अस्तित्व है।

सामूहिक विचारों की शक्ति

जब कई मनुष्य बैठकर आपस में किसी विषय पर विचार विमर्श करते हैं और उनके मत आपस में मिल जाते हैं, तो एक ऐसी प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न होती है, जिसके बल पर बड़े-बड़े कठिन कार्य पूरे हो सकते हैं। किसी कारखाने के सब कर्मचारी एकमत हों, तो समझना चाहिए कि इसकी विशेष उन्नति होगी। जिस घर के सब लोग सन्तुष्ट हों, समझना चाहिए कि यहीं स्वर्ग का निवास है। उस घर में दुःख और दरिद्र का प्रवेश शायद ही कभी हो। एकता के विचारों से जो शक्ति प्रादुर्भूत होती है, वह बड़ी ही प्रबल होती है। सत्संग की प्रथा का भारत में बड़ा महत्व है। कुछ व्यक्ति एक स्थान पर एकत्रित होकर यदि पवित्र हृदय से सत्य, प्रेम, परोपकार आदि की भावनाओं पर चित्त को लगाते रहें, तो उस वायु मण्डल में एक उत्तेजक विद्युत उत्पन्न होगी, जो उन भावों को बढ़ावेगी और स्थायी बना देगी। उत्तरी अमेरिका की प्राचीन प्रथा है कि वहाँ के निवासी जब किसी युद्ध में जाते थे, तो सब योद्धा मिल कर गोलाकार खड़े हो जाते थे और एक से विचारों पर एकाग्रता करते थे, इससे इतनी वीरता का उद्भव होता था कि, वे लड़ाई को जीतने के लिए उन्मत्त हो जाते थे, और उसी वीरता के आवेश में युद्ध विजय करते थे। अच्छे भाषण कर्ता और नट पहले अपने कामों पर विचारा करते हैं, तब अपना कार्य आरम्भ करते हैं, ऐसा करने से उनका भाषण या प्रदर्शन बहुत ही अच्छा बनता है। दो मित्र यदि एक स्थान पर बैठकर नियमित रूप से एक समान अच्छे-अच्छे विचारों पर मनन किया करें तो उन्हें बहुत लाभ हो सकता है। एक ही रंग रूप की विचार-धाराएं आपस में मिलकर बलवती हो जायँगी और दूने वेग से दोनों के मन में उच्च कोटि के विचार लावेंगी। इसके द्वारा वे आरोग्यता, आयुष्य और समृद्धि के परमाणुओं को आकर्षित कर सकते हैं।

स्त्रियाँ चक्की पीसें

(श्रीमती सुशीलादेवी मिश्रा)

स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम अत्यन्त आवश्यक है। आज-कल हमारी देवियाँ बिना व्यायाम के ६० प्रतिशत बीमार-सी बनी रहती हैं। देवियाँ फैशन की इतनी गुलाम बन गई हैं कि, वह अपने हाथों से कार्य करना तक पसन्द नहीं करतीं। नौकर काम करता है, वह चाहे अच्छा करे या बुरा, पर उन्हें स्वयं हाथ लगाना अच्छा नहीं लगता। पुराने जमाने में हमारे घरों में इतने काम-काज होते थे कि, उनके करते रहने से स्त्रियों का स्वास्थ्य बहुत अच्छा रहता था, और आर्थिक स्थिति भी अच्छी रहती थी। मगर आजकल स्त्रियाँ कुछ व्यायाम नहीं करतीं, इसलिए वह बीमार बनी रहती हैं। पहले प्रातः काल का समय चक्की पीसने का होता था, प्रत्येक स्त्री अपने घर का ५-६ सेर अनाज पीसती थी, उसके बाद अन्य गृह-कार्य करती थी, इस चक्की से प्रातः काल का अच्छा व्यायाम हो जाता था, चक्की एक ऐसा व्यायाम है कि इसके द्वारा शरीर के सब अंगों का अच्छा व्यायाम हो जाता है और इसके द्वारा सब अङ्ग सुगठित और दृढ़ हो जाते हैं। जो स्त्रियाँ व्यायाम नहीं करतीं, उनके शरीर प्रायः शिथिल रहते हैं और गर्भावस्था में इनको अनेक रोग सताते हैं। अगर गर्भावस्था के दिन किसी प्रकार सही-सलामत निकल भी गए, आराम से कट गए, तो फिर प्रसव के समय इनको बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। वास्तव में वह समय बड़े सङ्कट का होता है, व्यायाम न करने वाली स्त्रियों को प्रसव वेदना का जितना कष्ट उठाना पड़ता है, उतना व्यायाम करने वाली महिलाओं को नहीं उठाना पड़ता। प्रति वर्ष हजारों स्त्रियाँ प्रसव काल में अपने प्राण तक दे बठती हैं, इस सबके हम स्वयं उत्तरदायी हैं। जो स्त्रियां व्यायाम किया करती हैं, उन्हें इन भावी सङ्कटों का सामना नहीं करना पड़ता। व्यायामों में चक्की का व्यायाम सबसे उत्तम है। डाक्टर लोग भी गर्भवती स्त्रियों को चक्की पिसवाना ही बतलाते हैं। गाँवों की स्त्रियाँ जो सदैव चक्की पीसती हैं, कभी ऐसे रोगों से ग्रसित नहीं होतीं। प्रसव के दिन उन्हें कुछ भी कष्ट प्रद नहीं मालूम होते। बहुत सी स्त्रियों के तो खेतों पर काम करते हुए प्रसव हो जाता है और वह बच्चे को गोद में उठा कर मजे में घर चली आती हैं, यह है व्यायाम की खूबी! इसलिए प्रत्येक गृह-देवी को चक्की पीसने की आदत अवश्य डालना चाहिए। मशीन की चक्की का आटा भी स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं होता, उसके सब पौष्टिक कण जल जाते हैं, फिर वह पचने में भी अधिक समय लेता है। इस आटे से शरीर को, पोषक तत्व नहीं मिलते। हाथ की चक्की का आटा अत्यन्त पौष्टिक, रक्तवर्धक और शीघ्र पचने वाला होता है। इसमें सब अपेक्षित पौष्टिक तत्व विद्यमान रहते हैं, इसलिए सदैव हाथ की चक्की का पिसा आटा खाना चाहिए और हाथ का आटा भी अपने हाथ का अधिक लाभकारी होता है। इस प्रकार जहाँ आप अपना, अपने बच्चों का और अपने पुरुषों का स्वास्थ्य अच्छा रक्खेंगीं, वहाँ आपको पैसों की भी बचत होगी, इसलिए देवियों को घर में चक्की बनानी चाहिए और उसी का पिसा आटा खाना चाहिए।

जिस प्रकार स्वास्थ्य के लिए चक्की पीसना हितकर है, उसी प्रकार चर्खा कातना भी परमोपयोगी है। देशबन्धु महात्मा गांधी ने चर्खे की महत्ता की बहुत कुछ वर्णन किया है, इसके कातने से जहां हलका व्यायाम हो जाता है, वहां यह आर्थिक समस्या को भी सुलभ करता है। यदि बहिनें उपर्युक्त प्रार्थना को कार्यान्वित करेंगी तो स्वयं, अपने बच्चों को और अपने पुरुषों को स्वस्थ रखते हुए, उन्हें अनेक आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त करेंगी।

स्वर्णिम-पथ !

(पं० श्रीकान्त शास्त्री, नारायणपुर)

वह थी उषा का सुषुमापूर्ण शुभागमन-बेला। रजनी का धूमिल अम्बर स्वच्छ एवं सुरुचिपूर्ण हो चला था। तारक-तति के अद्भुत तिरोधान से एक अलौकिक छटा सी छा गई थी। मलयानिल की मधुरता एक अजीब मादकता उडेल रही थी। अचानक सराय का सदर फाटक खोलने को द्वारपाल आ धमका। कहना नहीं होगा कि उसके बहुत पहले ही से यात्रियों का एक दल निश्चल सा हो, द्वार के बृहद् काय कपाटों पर दृष्टि केन्द्रित कर द्वारपाल की प्रबल प्रतीक्षा कर रहा था। यद्यपि वे यात्री थे, पर उनके पास न तो पाथेय था और न जलपात्र ही। फिर भी यह सर्वथा उल्लेखनीय है कि उन भिखमंगों के दिव्य चेहरे पर अदम्य उत्साह की कान्ति प्रद्योतित हो रही थी। द्वारपाल ने उनके प्रति सहानुभूति पूर्ण शब्दों में कहा—आप कहाँ जाँयगे ? दलाधिनायक ने सुस्मित स्वरों में उत्तर दिया—अनन्त की ओर !

'तो किस मार्ग का द्वार खोलने की चेष्टा करूँ?'

'स्वर्णिम-पथ का'।

'आखिर आप लोगों का संक्षिप्त परिचय पाने की चेष्टा कर सकता हूँ ?'

'हाँ क्यों नहीं ! हम अनन्त पथ की ओर जाने वाले अमर-यात्री हैं'।

'(आश्चर्य से) अनन्त पथ की ओर ! स्पष्ट बतायें आपका मन्तव्य क्या है ?'

'(मुस्कुरा कर) महाशय ! हम वहाँ तक जायेंगे, जहाँ तक कोई जा सकता है।'

'पर आपके पास यात्रा की तो कोई सामग्रियाँ नहीं हैं'।

'हैं, हमारे पास करेन्सी नोट हैं। उन्हेंही भुना कर अपना काम कर लेंगे, उस दिव्य नोट का नाम आत्म-बल है'।

'ऐसी बात है तो आइये-मैं स्वर्णिम-पथ का द्वार खोलता हूँ। इसका दूसरा नाम कर्त्तव्य-पथ है। इसका द्वार सुई की सुराख से भी समधिक संकीर्ण एवं असि धार से भी तीक्ष्ण है'। 'कोई परवाह नहीं' यह कहता हुआ दलाधिपति अपने दल बल के साथ पलक मरते आँखों से ओझल हो गया।

(२)

भगवान् भास्कर ने अपनी स्वर्णिम एवं सुस्निग्ध शैशव किरणों से घास पर पर के बिखरी मोती सी ओसों को चुगना प्रारम्भ किया। लता गुल्मों ने अपनी उलझाई आँखों से संसार को कटाक्षमय दृष्टि से देखा। यद्यपि मन्दिर एवं गिरजों के घण्टे और घडियाल बेसुध बज रहे थे, पर फिर भी उनके तुमुल नादों को फोड़ते हुए ये नारे अभी तक कर्ण-कुहरों में प्रवेश कर रहे थे—'हम लोग स्वर्णिम-पथ पर अनन्त की ओर जा रहे हैं, जिसे अनुसरण करना हो पद-चिन्ह देख कर आये।' पर हन्त ! यह तो मुझे बिलकुल मालूम नहीं है कि कोई पद-चिन्ह देख कर गया या नहीं, कारण मैं तो दिन चढ़े तक शय्या पर बे सुध पड़ा हूँ। और कब तक चित्त पड़ा रहूँगा, मुझे बिलकुल मालूम नहीं।

मर्यादा और लज्जा किसी अवस्था-भेद से प्रादुर्भूत नहीं होते। अपने कर्तव्य का भली भाँति पालन करो, इसी में सच्ची मर्यादा का वास है।

× × ×

सत्य और प्रेम इस संसार की सब से शक्तिशाली वस्तुएँ हैं, जिस घड़ी यह दोनों साथ-साथ रहते हैं सरलता से इनका निवारण नहीं किया जा सकता।

× × ×

जो लोग दूसरों के जीवन को प्रसन्न बनाते हैं, वे अपने जीवन को प्रसन्नता से दूर नहीं रख सकते।

पाठकों के पृष्ठ

आपकी भेजी हुई अमूल्य उपदेश पूर्ण पुस्तकें प्राप्त हुईं, आशातीत प्रभावशाली हैं। आपकी दो पुस्तकें तो बहुत ही अधिक रोचक लगीं। एक तो 'मैं क्या हूँ ?' दूसरी 'वशीकरण की सच्ची सिद्धि।' जब तक पढ़ नहीं लिया, दिल उन्हीं में लगा रहा। पहली पुस्तक का तो हृदय पर तीन चार दिन तक प्रभाव रहा।

—राजकुमारी 'ललन' मैनपुरी एस्टेट।

'धनवान बनने का गुप्त रहस्य' जैसी निराशों को आशा प्रदान करने वाली पुस्तकें हिन्दी में तो मेरे देखने में कोई नहीं आईं। वास्तव में ऐसी ही पुस्तकों की आज देश को आवश्यकता है।

—विजयकुमार भट्ट, एम० ए० काशी।

'बुद्धि बढ़ाने के उपाय' पुस्तक से हमारी पाठशाला के विद्यार्थियों को बहुत लाभ हुआ है। कई सुस्त लड़के तेज हो गये हैं। कई की अविकसित शक्तियों का महत्व पूर्ण विकास हुआ है।

—शंकरदत्त हैडमास्टर, प्रतावनगर।

अखण्ड ज्योति जब से हमारे घर में आई है। सब प्रकार के क्लेश-कलह मिट गये हैं। हमारे परिवार में १६ व्यक्ति हैं। इनमें से जो पढ़े हैं, वे तो स्वयं आदि से अन्त तक इसका पाठ करते हैं, जो पढ़े नहीं हैं, वे तब चैन लेते हैं जब इसके एक-एक अक्षर को सुन लेते हैं। आपके अमूल्य विचारों ने हमारे घर को सचमुच स्वर्ग बना दिया है। ऐसा मानसिक भोजन प्राप्त करने से जो लोग अज्ञान या लोभ के कारण वंचित रह जाते हैं, उन्हें मैं अभागा हो कहूँगा।

—मोतीचन्द श्यामचन्द भाटिया, सूरत।

अखण्ड-ज्योति के तेरह ग्राहक बना कर भेज रहा हूँ। मैंने अपने उन मित्रों को आग्रह पूर्वक अनुरोध किया था, क्योंकि मैं समझता हूँ कि इन लोगों का सब से बड़ा हित इसी में है। इस छोटे से प्रयत्न में मुझे यज्ञ करने जैसी शान्ति मिली है।

—एन० वी० राजैय्या, त्रिविरम् स्टेट।

'सूर्य चिकित्सा' और 'प्राण चिकित्सा' की विधि से इलाज करने का हमारा शफाखाना बहुत सफलता पूर्वक चल रहा है। अब तो रोगियों की संख्या प्रतिदिन ६० से भी ऊपर पहुँचती है। इनके द्वारा जादू की तरह जो लाभ होता है, उसके कारण हम लोग यश और धन दोनों ही सन्तोष-जनक रीति से प्राप्त कर रहे हैं।

—भीष्मप्रसाद पाण्डेय, पंचवटी।

मैस्मरेजम विद्या सीखने की जिज्ञासा आपकी 'परकाया प्रवेश' और 'मानवीय विद्युत के चमत्कार' पुस्तकों ने पूरी करदी है, त्राटक बहुत आगे बढ़ गया है। अब मैं बालकों को ही नहीं बड़ी आयु के स्त्री पुरुष को भी दृष्टिपात द्वारा बेहोश कर देने में अच्छी तरह सफल होने लगा हूँ।

—टी० सी० भल्ला, अमृतसर।

तन्दुरुस्त बनने के लिए अब तक मैंने अनेका-अनेक कठिन क्रियाऐं की हैं, तरह-तरह के मूल्यवान भोजन किये हैं; पर सदैव असफलता ही प्राप्त होती रही। 'स्वस्थ और सुन्दर बनने की विद्या' पुस्तक ने मेरी आँखें खोल दी हैं। अब मेरा पुराना दृष्टिकोण बिलकुल बदल गया है और अनुभव करने लगा हूँ कि अब तक क्यों असफल रहा। मेरा विश्वास है कि इस पुस्तक की सहायता से अब मेरा लोक और परलोक आनन्दमय बन जायगा।

—गणपति शङ्कर पिल्लई, ट्रावनकोर।

शीघ्र पतन और स्वप्न दोष के कारण मेरा शरीर जर्जर हो गया था और दाम्पत्ति जीवन बड़ा कलहमय था। 'भोग में योग' पुस्तक की सहायता से मेरा काया कल्प हो गया। इन दोनों राक्षसों से पीछा छूट गया। इसका सारा श्रेय 'भोग में योग' पुस्तक को ही है।

—पूरनचन्द 'आजाद' बलिया।

चेतावनी

(सन्त कबीर)

—:०:—

कबीर नौबत आपनी दिन दस लेहु बजाय।
यह पुर पाटन, यह गली, बहुरि न देखहु आय॥
सातों शब्द जु बाजते, घरि घरि होते राग।
ते मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग॥
एक दिन ऐसा होयगा, सब सों पड़े बिछोह।
राजाराणा छत्रपति, सावधान किन होइ॥
कबीर कहा गरवियो, इस जोवन की आस।
टेसू फूले चारि दिन, खंखर भये पलास॥
कबीर कहा गरवियो, ऊँचे देखि अवास।
कल मरघट में लेटना, ऊपर जम है घास॥
कबीर कहा गरवियो, काल गहै कर केस।
ना जानों कब मारिहै, कै घर कै परदेश॥
यह ऐसा संसार है, जैसा सेंवर फूल।
दिन दस के व्यौहार को, झूठे रंग न भूल॥
जीवन मरण विचार के, कूड़े काम निवारि।
जिस पथ से चलना तुझे, सोई पंथ सँभारि॥
बिन रखवारे बाहिरा, चिड़ियों खाया खेत।
आधा परधा ऊबरै, चेति सकै तो चेत॥
हाड़ जलैं ज्यों लाकड़ी, बाल जलें ज्यों घास।
सब तन जलता देख कर, भया कबीर उदास॥
कबीर धूलि समेट करि, पुड़ी जु बाँधी एह।
दिवस चारि का पेखना, अन्त खेह की खेह॥
कबीर सुपने रैन के, ऊघड़ि आये नैन।
जीव पड्या बहु लूटि में, जगै तो लेन न दैन॥
कहा कियौ हम आय कर, कहा कहैंगे जाय।
लाभ लेन तो दूर है, चाले मूल गवाँय।
यह अवसर चेता नहीं, पशु ज्यों पाली देह।
राम नाम जाण्या नहीं अन्त पड़ी मुख खेह॥
मानुष जीवन दुलभ है, देह न बारम्बार।
तरुवर ते फल झड़ि पड़ा, बहुरि न लागै डार॥
कबीर यह तन जात है, सकै तो लेहु बहोर।
नंगे हाथों वे गये, जिन के लाख करोर॥

पुस्तकें मँगाने वालों को सूचना

१—कम से कम चार पुस्तकें मँगाने वालों को चौथाई कमीशन मिलेगा। रजिस्ट्री पैकिट का डाक खर्च एक आना प्रति पुस्तक के हिसाब से लगेगा जो ग्राहक को देना होगा। कमीशन काट कर और डाक खर्च जोड़ कर मूल्य भेजना चाहिए

२—एक, दो या तीन पुस्तकें मँगाने वालों को पूरा मूल्य भेजना चाहिए। एक आने के बैरंग पैकिट द्वारा पुस्तकें भेजेंगे ताकि रास्ते में उनके खोने का डर न रहे।

३—वी० पी० का तरीका अधिक खर्चीला है इसमें ग्राहक नुकसान में रहते हैं। इसलिए मूल्य मनीआर्डर से भेजना चाहिए।

४—सन् ४१ के अखण्ड-ज्योति के सब अङ्क मौजूद हैं। जो मँगाना चाहें =) प्रति के हिसाब से मँगा सकते हैं। इस पर कोई कमीशन न दिया जायगा। सन १९४० के सिर्फ ६ अङ्क मौजूद हैं, ६ समाप्त हो गये। —मैनेजर अखण्ड ज्योति

नम्रता दिखा कर किसी के हृदय में पश्चात्ताप की भावना भरना कठोरता के साथ फटकारने से उत्तम है।

❀ ❀ ❀

यह जन श्रुति की विफलता ही सफलता के निमित्त राजमार्ग है, अत्यन्त प्राचीन एवम् नितान्त सत्य है।

❀ ❀ ❀

शीघ्रता के साथ निर्धारित किया हुआ विचार अधिकतर प्रमाद की ओर झुकता है तदनन्तर अभिमान आकर बुद्धि को जकड़ लेता है।